जनवरी 2021

दादावाणी

Retail Price ₹ 15

इस शरीर में चुंबकत्व नाम का गुण है। क्योंकि अंदर इलेक्ट्रिकल बॉडी है।
इसलिए उस बॉडी के आधार पर सारी इलेक्ट्रिसिटी पैदा हुई है।
जहाँ खुद के परमाणुओं से मिलते-जुलते परमाणु आएँ, वहाँ आकर्षण और विकर्षण होता है।
वह कहेगा, 'मेरी देह खिंचती है।' अरे! तेरी इच्छा नहीं है तो देह क्यों खिंचती है?
इसलिए, वहाँ पर खोज निकाल, 'तू कौन है।'

वर्ष : 16 अंक : 3
अखंड क्रमांक : 183
जनवरी 2021
पृष्ठ - 28

Editor : Dimple Mehta
© 2021
Dada Bhagwan Foundation
All Rights Reserved.
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Offset
B-99, GIDC, Sector-25,
Gandhinagar – 382025.

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सिटी,
अहमदाबाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज**,
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : 9328661166-77
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
+91 8155007500

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
15 साल
भारत : 1500 रुपये
यू.एस.ए. : 150 डॉलर
यू.के. : 120 पाउन्ड
वार्षिक
भारत : 150 रुपये
यू.एस.ए. : 15 डॉलर
यू.के. : 12 पाउन्ड
भारत में D.D./M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से
संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

यदि समझें 'आकर्षण दोष' को तो रह सकते हैं सतर्क

संपादकीय

सभी संयोगों से अप्रतिबद्ध विचरने वाले, महामुक्त दशा में रहने वाले ज्ञानी पुरुष ने कितना ज़बरदस्त विज्ञान देखा! विषय से मुक्ति के लिए कर्तापन की समस्त भ्रांति तोड़कर ज्ञानी पुरुष ने खुद आत्मा और *पुद्गल* (जो पुरण और गलन होता है) को, जैसा है वैसा, देखा व जाना है और अनुभव किया है। ऐसे वैज्ञानिक 'अक्रम मार्ग' का 'समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य' से संबंधित अद्भुत रहस्य हमें ऐसे पंचम् काल में प्राप्त हुआ है जिसमें मन-वचन-काया की एकता नहीं है यही सब से बड़ा आश्चर्य है!

परम पूज्य दादा भगवान (दादाश्री) कहते हैं कि 'विषय विष नहीं हैं लेकिन विषय में निडरता, वह विष है।' अक्रम विज्ञान सभी प्रकार से निर्भय बनाता है। परंतु विषय में निर्भय नहीं बनना है, वहाँ जाग्रत रहना है। प्रस्तुत अंक में, विषय से संबंधित विविध प्रकार के दोषों में से एक 'आकर्षण दोष' का विश्लेषण हुआ है। खुद की इच्छा नहीं होने के बावजूद भी आकर्षण क्यों होता है? आँखें क्यों खिंचती हैं? दृष्टि क्यों बिगड़ती है? देह को कौन खींचता है? आकर्षण क्या है? विकर्षण क्या है? आकर्षण व विकर्षण होने का कारण क्या है? दादाश्री ने यहाँ पर आकर्षण के जोखिम और उसमें से निकलने की सैद्धांतिक समझ रूपी ज्ञान चाबियाँ दी हैं।

'अक्रम विज्ञान' स्त्री-पुरुष के आकर्षण को क्या कहता है? जैसे कि चुंबक लोहे को आकर्षित करेगा ही क्योंकि परमाणुओं का ऐसा स्वभाव है! उसी तरह स्त्री-पुरुष के परमाणु एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं। तय किया हो कि 'खुद को आकर्षित नहीं होना है' फिर भी खिंच जाता है, तो वह क्या सूचित करता है कि, अब इसमें 'खुद का' *चलण* (सत्ता) नहीं है, कोई परसत्ता या मैग्नेटिक फोर्स खींच रहा है। पहले के 'चार्ज' हुए परमाणुओं के कारण जब स्त्री और पुरुष आमने-सामने 'फील्ड' में आते हैं तब परमाणु खिंचते हैं। तब खुद मानता है कि, 'मैं खिंचा। मुझे अभी भी आकर्षण होता रहता है।' वास्तव में इसमें परमाणु ही खिंचते हैं। उसमें यदि 'खुद' तन्मयाकार न हो, तो परमाणु 'इफेक्ट' देकर सहज स्वभाव से 'डिस्चार्ज' हो जाते हैं। परंतु विज्ञान की ऐसी वास्तविकता समझ में नहीं आने की वजह से 'खुद की' मान्यता में भूल रहा करती है। उसी प्रकार मिठास के लालच से खुद इफेक्ट में एकाकार हुए बगैर नहीं रहता। परिणाम स्वरूप नया 'चार्ज' करता है। उसमें भी यदि 'आत्मज्ञान' की जागृति रहे और तुरंत ही प्रतिक्रमण करके वापस आत्मभाव में आ जाए तो वह परमाणु के असर से छूट जाता है।

ज्ञानी पुरुष की विज्ञानमय वाणी में, आकर्षण (रूपी नदी) में डूबे बगैर, घाट पर से ही बाहर निकल जाने की जागृति देने वाले सिद्धांत ऐसे हैं जो विषय की गांठ के सामने, निश्चित ही हमेशा के लिए हल ले आते हैं। ब्रह्मचर्य की 'सेफ साइड' के लिए आंतरिक और बाह्य 'एविडेन्स' को ज्ञान से पुरुषार्थ द्वारा खत्म करके 'आकर्षण दोष' से मुक्त होकर, विषय से निर्ग्रंथ होने का पुरुषार्थ करें, यही अभ्यर्थना।

- जय सच्चिदानंद

यदि समझें 'आकर्षण दोष' को तो रह सकते हैं सतर्क

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

चिपके चित्त बाहर जाते ही...

प्रश्नकर्ता : यहाँ घर में बैठे हुए हों तो चित्त इधर-उधर नहीं होता, लेकिन बाहर ज़रा रास्ते पर निकलें तो रास्ते तो स्त्री रहित होते नहीं और इस तरफ विषय की गांठ फूटे बिना रहती नहीं।

दादाश्री : और आपको बाहर निकले बिना चलेगा नहीं! बाहर कुछ लेने जाना पड़ता है, नौकरी-व्यापार के लिए जाना पड़ता है और विषय खड़े हुए बिना रहता नहीं और इसलिए उसका प्रतिक्रमण किए बिना चलता नहीं। प्रतिक्रमण करेंगे तो हल आएगा, वर्ना जो आकर्षण हुआ था वह तो फिर चिपक ही जाएगा। बाहर आना-जाना पड़ता है, उसके बिना चलेगा नहीं, घर बैठे रहे तो दुनिया में चलेगा नहीं। 'व्यवस्थित' के हिसाब से जाना पड़ता है और वह चिपके बिना नहीं रहता। जागृति है, फिर भी पिछले जन्म के सारे मेल हैं न, इसलिए आकर्षण होता है और वापस से झंझट हुए बिना नहीं रहता। भटकने के मार्ग ऐसे हैं जो चित्त को आकर्षित करावाते हैं।

वस्तुस्थिति में विषय की जो गांठ है, वह जैसे पिन को चुंबक आकर्षित करता है, वैसे ही इसमें आकर्षण खड़ा होता है।

'आकर्षण' है, अज्ञानता का दोष

इन आँखों का स्वभाव है आकृष्ट होना। कोई सुंदर मूर्ति देखे न, तो आँखों को आकर्षण होता है। यह आकर्षण कैसे हुआ? तब कहते हैं कि पूर्व जन्म का हिसाब है, हमें आकर्षण नहीं करना हो फिर भी होता रहता है। आकर्षण, वह डिस्चार्ज हो रही चीज़ है इसलिए जहाँ आकर्षण हो, वहाँ हमें ज्ञान हाज़िर रखना है कि 'दादाजी ने कहा है कि चमड़ी छीलें तो क्या निकलेगा?' ताकि वैराग्य आ जाए और फिर मन टूट जाए, वर्ना आकर्षण के साथ मन एडजस्ट हुआ तो खत्म कर देगा। लफड़े ही चिपक जाएँगे। लफड़े चिपकें तो फिर छूटते नहीं हैं, सात-सात जन्मों तक नहीं छूटते, ऐसा बैर बाँधते हैं, लेकिन हमें तो मोक्ष में जाना है। मोक्ष में जाने वाले को ऐसे लफड़े वाला व्यापार सहन ही नहीं होगा। जो माल हमें नहीं चाहिए, सभी हलवाई की दुकानें हो, लेकिन हमें कुछ नहीं लेना हो, तो क्या हम उन्हें देखते रहते हैं?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : उसी तरह स्त्री को पुरुषों की ओर नहीं देखना चाहिए और पुरुषों को स्त्रियों की ओर नहीं देखना चाहिए क्योंकि वे अपने काम का नहीं हैं। दादाजी कहते थे कि 'यही कचरा है', तो फिर उसमें देखने को क्या रहा?

एक बार एक बड़े संत छत पर बैठे-बैठे किताब पढ़ रहे थे। सामने वाले किसी घर की खिड़की में एक स्त्री खड़ी होगी, उन्होंने उसे देखा तो उनकी आँखें आकृष्ट हुई और वे तो विचारशील इंसान, इसलिए मन में लगा कि, 'ऐसा क्यों हो रहा है? ऐसा नहीं होना चाहिए।' फिर वापस पढ़ने लगे, लेकिन फिर से आँखें आकृष्ट

हुई तब उन्हें लगा कि, 'यह तो बहुत गलत है।' इसलिए तुरंत वहाँ से उठकर रसोई में गए और रसोई में जाकर पिसी हुई लाल मिर्च आँखों में डाल दी। यह क्या उन्होंने अच्छा किया? वह क्या आँखों का दोष है? किसका दोष है?

प्रश्नकर्ता : मन का दोष है।

दादाश्री : नहीं, अज्ञानता का दोष है। अज्ञान है, इसीलिए न! अब आँखों में मिर्च डालना, ऐसा उनके किसी भी शिष्य ने नहीं सीखा। शिष्य जानते थे कि गुरु महाराज इमोशनल हो गए होंगे और मिर्च डाली होगी, हमें नहीं डालनी है भाई! आँखों में मिर्च डालने से क्या फायदा होगा? इसके बजाय यदि मेरी बात याद रहेगी तो मोह उत्पन्न ही नहीं होगा न? और वास्तव में वैसा ही है। यह क्या कोई गप्प है?

आकर्षण से होता है निदिध्यासन

प्रश्नकर्ता : आँखें आकृष्ट हों, लेकिन विकारी भाव नहीं हों तो?

दादाश्री : तो हर्ज नहीं। विकारी भाव अपने में नहीं हों लेकिन अगर सामने वाले में हों तब क्या होगा? इसलिए आकर्षण में नहीं फँसना है। जहाँ आँखें आकृष्ट हों, वहाँ से दूर रहना। अन्य कहीं, जहाँ आँखें सीधी रहें, वहाँ सब व्यवहार करना। जहाँ आँखें आकृष्ट हों, वहाँ पर जोखिम है, लाल झंडी है। अपने में विकारी भाव न हों, लेकिन सामने वाले का क्या? सभी जगह आकर्षण नहीं होता न?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : अत: आकर्षण के नियम हैं कि कुछ जगहों पर ही आकर्षण होता है, हर कहीं नहीं होता। अब यह आकर्षण किस तरह होता है, वह आपको बता दूँ।

इस जन्म में आकर्षण नहीं हो, फिर भी किसी पुरुष को देखा, तब यदि आपके मन में ऐसा हो जाए कि, 'ओहोहो! यह पुरुष कितना सुंदर है, खूबसूरत है!' ऐसा आपको हुआ कि तभी अगले जन्म की गांठ पड़ गई। उससे अगले जन्म में आकर्षण होगा। कैसा रूप? इसे छीलें तो क्या निकलेगा? रूप किसे कहते हैं कि छीलने पर भी खराब नहीं निकले। इस रूप को तो देखने जैसा नहीं है। हीरे का रूप ठीक है। उसे अगर छीलें तो कुछ भी नहीं होगा, उसमें गंदगी नहीं है न?! सोने का, चाँदी का रूप ठीक है। इन मनुष्यों के गुण होते हैं, लेकिन वे कैसे गुण होते हैं? संसारी गुण। संसारी गुणों की प्रशंसा करने जाएँ, तब आकर्षण होता है।

किसी के साथ हम फ्रेन्डशिप भी न करें, बहुत घाल मेल नहीं रखें। एक बार यह लफड़ा चिपकने के बाद तो फिर अलग नहीं हो पाता।

'जेनुं निदिध्यासन करे, तेवो आत्मा थाय
जे जे अवस्थे स्थित थए, व्यवस्थित चितराय'

निदिध्यासन यानी कि, 'यह स्त्री सुंदर है या यह पुरुष सुंदर है।' ऐसा सोचे, तो उतनी देर वह निदिध्यासन हो गया। सोचा कि तुरंत ही निदिध्यासन हो जाता है। फिर खुद वैसा ही बन जाता है। अत: अगर हम देखेंगे तभी झंझट होगा न? उससे अच्छा तो आँखें नीचे कर देनी चाहिए। आँखें गड़ानी ही नहीं चाहिए। पूरा जगत् फँसाव है। फँसने के बाद तो चारा ही नहीं है। कितने ही जन्म खत्म हो जाएँ, लेकिन फिर भी उसका 'एन्ड' ही नहीं है!

मूल 'रूट कॉज' का पता लगा

भगवान ने कहा है कि एक भूल मत करना। जिसका दोष हो, उसे दंड देना! भैंस की गलती और चरवाहे की गलती, दोनों की गलती देखना और बाद में दंड देना! लेकिन इस जगत् के लोग

तो भैंस की भूल पर चरवाहे को मारते हैं! 'यह गुनाह किसका है?' उसकी जांच तो करनी ही चाहिए न? यों तो कहता है कि, 'मुझे ब्रह्मचर्य पालन करना है', और फिर कहता है कि 'मेरी इच्छा नहीं है, फिर भी देह खिंच रही है।' तो तूने उपाय क्या किया? तब कहता है, 'देह में खाना कम डाला है।' अरे! भैंस की भूल के लिए चरवाहे को क्यों मार रहा है? लेकिन यह बात उसे समझ में कैसे आए? ज़रा सोच न, कि मेरी इच्छा नहीं है, तो फिर इस देह को खींच कौन रहा है? यह देह तो आलपिन जैसी है। यदि चुंबक सामने रखोगे तो पिन हिलने लगेगी! इस देह में 'इलेक्ट्रिकल बॉडी' है। इसलिए समान परमाणु मिलने पर 'बॉडी' खिंचती है। लेकिन यह तो कहेगा कि, 'कल से अब देह को खाना नहीं देना है, इस देह को अब भूखा रखूँगा।' अरे! गलती ढूँढ निकाल न! यह तो *पूरण-गलन* (चार्ज होना-डिस्चार्ज होना) है। तूने *पूरण* किया है, तो *गलन* होगा ही। इसलिए मूल 'रूट कॉज़' खोज निकाल। लेकिन 'रूट कॉज़' खुद को, अपने तरीके से कैसे मिलेगा? वह तो ज्ञानी पुरुष बता सकते हैं। इसलिए ज्ञानी को ढूँढो! और ज्ञानी तो कभी-कभार ही होते हैं, वे तो अति-अति दुर्लभ हैं!

जहाँ चिपका चित्त, वहाँ डला बीज

कोई स्त्री बाहर सब्ज़ी-भाजी लेने निकले, तब किसी पुरुष को देखकर उसका चित्त वहाँ चिपक जाता है। ऐसे चित्त चिपकने से बीज डल जाते हैं। आते-जाते ऐसे पच्चीस-पचास पुरुषों के साथ बीज डलते हैं। ऐसा प्रतिदिन होता रहता है, ऐसे अनेक पुरुषों के साथ बीज डलते हैं। ऐसा ही पुरुषों को स्त्रियों के प्रति होता है। अब, अगर ज्ञान हाज़िर रहे तो बीज डलने बंद हो जाए, फिर भी प्रतिक्रमण करने पर ही निबेड़ा आएगा। ये बीज तो मिश्रचेतन के संग डलते हैं। फिर मिश्रचेतन दावा करेगा। मिश्रचेतन तो कैसा होता है कि दोनों की मरज़ी में डिफरेन्स, दोनों का संचालन अलग। वहाँ खुद की इच्छा नहीं हो, फिर भी यदि सामने वाले को सुख भोगने को चाहिए, तो क्या होगा? उसमें से फिर राग-द्वेष के कारखाने शुरू होंगे। अपने पास तो ज्ञान है, इसलिए शुद्धात्मा देखकर, जो चित्त पर चिपका था उसे धो देना। वर्ना यदि चित्त चिपके तो उसका फल दो-पाँच हज़ार सालों बाद भी आ सकता है!

इस कलियुग की वजह से स्त्री-पुरुषों में आमने-सामने असर होता है। दोनों को संतोष हो, फिर भी यदि बाहर कुछ देखे, तो दृष्टि गड़ जाती है। वह सब से बड़ा भय सिग्नल है। इस दृष्टि में मिठास बर्ते, वह भी बहुत बड़ा जोखिम है। आप यदि मानी हों और आपको यदि कोई स्त्री मान दे तो आपकी दृष्टि खिंच जाएगी। कोई लोभी हो और उसे लोभ दे तो भी दृष्टि खिंच जाती है। फिर पूरा जीवन मटियामेट कर देता है!

अत: सावधान कहाँ रहना है कि स्त्री को पुरुष से और पुरुष को स्त्री से, बिल्कुल *लप्पन-छप्पन* (बेमतलब का व्यवहार या लेन-देन) नहीं करनी चाहिए, वर्ना वह तो भयंकर रोग है! उस विचार से ही मनुष्य बेसुध हो जाता है तो फिर आत्मा की जागृति कब होगी? यानी कि इतना सावधान रहना है। क्या इसमें कुछ मुश्किल है?

प्रश्नकर्ता : वहाँ सावधान रहना चाहिए।

दादाश्री : इतनी सी चीज़ से ही दूर रहने जैसा है। अन्य सभी चीज़ें हम छुड़वा देते है, रास्ता निकाल लेते हैं, लेकिन यहाँ तो चेतन मिश्रित हुआ न? यानी स्त्री-पुरुष दोनों को सावधान रहने जैसा है, भयंकर जोखिम है! हमेशा नज़रें झुकाकर ही रखना, हमारे मार्ग में अन्य कोई रोक नहीं है।

'वैराइटीज़ ऑफ पैकिंग्स' हैं! इनका अंत आए, ऐसा नहीं है, लेकिन इतनी अधिक जागृति

भी नहीं रह पाती। इसलिए तय ही कर लेना कि जो होना हो वह हो, लेकिन दृष्टि गड़ानी ही नहीं है। वर्ना बीज तो बहुत बड़े डल जाएँगे, जो अगला जन्म खत्म कर देंगे! वह जहाँ जाएगी, वहाँ इसे भी जाना पड़ेगा और फिर खत्म हो जाएगा।

नासमझी से हुए आकर्षण के सामने पृथक्करण

प्रश्नकर्ता : चित्त किसी एक ही जगह पर ज़्यादा आकर्षित होता है।

दादाश्री : उस जगह को खोद देना, खोदकर निकाल देना। वह जगह कहाँ है?

प्रश्नकर्ता : एक जगह यानी कुछ अंगों की तरफ ही दृष्टि ज़्यादा जाती है।

दादाश्री : जिसे ऐसा ज़्यादा होता हो, उसे शादी कर लेनी चाहिए। सभी जगह दृष्टि बिगाड़ने के बजाय एक कुएँ में गिरना अच्छा। बाद में, पचास की उम्र में कोई भी नहीं मिलेगी।

चोरी करना अच्छा लगता है? झूठ बोलना, मरना अच्छा लगता है? तो फिर क्या परिग्रह अच्छा लगता है? तो सिर्फ विषय में ही ऐसा क्या पड़ा हुआ है कि अच्छा लगता है?

प्रश्नकर्ता : बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता, फिर भी आकर्षण हो जाता है। उसका बहुत खेद रहता है।

दादाश्री : ऐसे खेद रहेगा तो आकर्षण खत्म हो जाएगा। यदि सिर्फ आत्मा ही देखेंगे तो फिर विषय (का भाव) कैसे हो सकता है? अन्य कुछ देखेंगे तभी विषय (का भाव) होगा न? तुझे विषय का पृथक्करण करना आता है?

प्रश्नकर्ता : आप बताइए।

दादाश्री : पृथक्करण यानी क्या कि विषय क्या ऐसे होते हैं कि इन आँखों को अच्छे लगें? क्या कान से सुनने पर अच्छा लगता है? और जीभ से चाटने पर मीठा लगता है? एक भी इन्द्रिय को अच्छा नहीं लगता। इस नाक को तो वास्तव में अच्छा लगता है न? अरे! बहुत खुश्बू आती है न? इत्र लगाया हुआ होता है न? यदि इस तरह पृथक्करण करेंगे, तब पता चलेगा। पूरा नर्क ही वहाँ पर पड़ा हुआ है, लेकिन इस तरह पृथक्करण नहीं करने की वजह से लोग उलझ गए हैं। वहीं पर मोह होता है, वह भी आश्चर्य ही है न!

प्रश्नकर्ता : तो वह आकर्षण किस वजह से रहता है?

दादाश्री : नासमझी की वजह से। जिस तरह नासमझी की वजह से तार जोइन्ट रह गया हो तो उसका आकर्षण होता रहता है लेकिन अब समझ में आ गया कि यह तो ऐसा है। पहले तो हम सही बात नहीं जानते थे और ऐसा पृथक्करण किया ही नहीं था न! लोगों ने जो माना, उसी को हमने सच माना कि यही सही रास्ता है, लेकिन अब जब से जाना तब से हम समझ गए कि इसमें तो पोल वाला खाता है। इसमें तो ओहोहोहो..... इतने सारे जोखिम हैं कि इसी वजह से तो पूरा संसार खड़ा है और पूरे दिन मार भी इसी की वजह से पड़ती है। उसमें भी यदि इन्द्रियों को अच्छा लगे वैसा हो तो ठीक है, लेकिन यह तो एक भी इन्द्रिय को अच्छा नहीं लगता।

आकर्षण के रुट कॉज़ में रही हुई हैं रोंग बिलीफें

प्रश्नकर्ता : स्त्री के अंगों के प्रति आकर्षण होने का क्या कारण है?

दादाश्री : मान्यता अपनी, रोंग बिलीफें हैं इसलिए। गाय के अंगों के प्रति आकर्षण क्यों नहीं होता?! सिर्फ मान्यताएँ। कुछ नहीं होता। सिर्फ बिलीफें हैं, बिलीफें तोड़ दो तो कुछ भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : वह जो मान्यता खड़ी होती है, ऐसा संयोग मिलने की वजह से होता है?

दादाश्री : लोगों के कहने से हमें हो जाता है। हमारे कहने से मान्यताएँ खड़ी होती है। क्योंकि आत्मा की हाज़िरी में मान्यता खड़ी होती है इसलिए दृढ़ हो जाती है और इसमें ऐसा है ही क्या? मांस के लोथड़े हैं!

प्रश्नकर्ता : एक बार मैं स्तन का ऑपरेशन देखने गया था। शुरू में देखे तो इतने सुंदर दिख रहे थे लेकिन ऑपरेशन करने के लिए चीरा तो कँपकँपी छूट गई।

दादाश्री : कुछ भी सुंदरता होती ही नहीं है, मांस के लोथड़े ही हैं। ये सब रोंग बिलीफें हैं। जगत् को पता ही नहीं है कि यह क्या है! बिलीफें ही रोंग हैं।

प्रश्नकर्ता : यह रोंग बिलीफ कैसे खत्म करें?

दादाश्री : सौ बार रोंग बिलीफ को सही मानी हों तो सौ बार उन्हें तोड़ना पड़ेगा, आठ सौ बार किया हो तो आठ सौ बार और दस बार किया हो तो दस बार।

प्रश्नकर्ता : अंदर से जो शोर मचाते हैं कि 'देख लो। देख लो', वे कौन हैं?

दादाश्री : वह तो रोंग बिलीफ वाला मन ही कहता है। बाद में प्राप्त हुआ ज्ञान, उस समय आकर रोक देता है कि ऐसा नहीं होना चाहिए। दोस्तों के साथ घूम रहे हों और वे कहें कि 'ओहोहो कैसे हैं, कैसे हैं!' तब हम भी अंदर बोल उठते हैं कि 'कैसे हैं!' ऐसे करते-करते स्त्री को भोग लिया। स्त्रियों के सामने आँखें नहीं गड़ानी हैं। स्त्रियों को देखना मत, छूना मत। क्योंकि स्पर्श से विषय के सभी तरह के असर होते हैं।

जहाँ आकर्षण, वहाँ है मोह

प्रश्नकर्ता : कोई स्त्री पास में बैठी हो और ऐसे ज़्यादा कुछ हो जाए तो डर लगता है कि हम कुछ गलत कर रहे हैं, अंदर ऐसा लगता है लेकिन फिर भी अभी भी आकृष्ट हो जाता है।

दादाश्री : वह तो कर्म के उदय आपको खींचते हैं न! अभी तो आपको देखना पड़ेगा कि कर्म के उदय यहाँ खींच रहे हैं। सभी की ओर नहीं खींचते। चार बैठी हों तो एक के प्रति आकृष्ट होता है बाकी पर नहीं। यानी हिसाब है, पहले का, पिछला।

प्रश्नकर्ता : ऑफिस में काम कर रहे हों तब, जब वह व्यक्ति गुज़रे तभी अपनी नज़र ऊपर उठती है।

दादाश्री : हाँ, यानी वहाँ पर हिसाब है। इसलिए वहाँ पर प्रतिक्रमण करते रहना है।

जब तक दृष्टि में किसी भी चीज़ पर आकर्षण है, तब तक उसे मोह है। वह मोह गया। दर्शन मोह गया, चारित्र मोह रहा। वह तो, यदि कुछ देखते ही बदलाव हो जाता हो तो दीवार को देखकर क्यों नहीं होता? बीच में कोई जानवर है, जो ऐसे बदलाव करवाता है। कौन सा जानवर? मोह नामक!

प्रश्नकर्ता : वह तो जितनी खुद की जागृति हो, तब पता चलता है कि अंदर कुछ बदलाव हुआ है, वर्ना कितना कुछ हो जाता है फिर भी पता नहीं चलता कि यह बदलाव हुआ है। पता ही नहीं चलता।

दादाश्री : जिसे भान ही नहीं है, उसे पता कैसे चलेगा? यह क्या हो रहा है? उसका भी भान नहीं है। आकर्षण और मोह नहीं होने चाहिए। फिर बाकी गुनाह माफ कर देते हैं।

सुंदर भोग लिए जाते हैं, अधिक

प्रश्नकर्ता : मोह किसे ज़्यादा होता है? खूबसूरत चमड़ी वाले को या काली चमड़ी वाले को?

दादाश्री : खूबसूरत चमड़ी वाले को। जिसकी चमड़ी सुंदर हो, तो समझ लेना कि वह लोगों के हाथों ज़्यादा भोगे जाएँगे।

खूबसूरत चमड़ी वाले तो गोरेगब जैसे होते हैं, वे ज़्यादा मोही होते हैं, इसलिए वे ज़्यादा भोग लिए जाते हैं। ऐसे सब ये कुदरत के नियम हैं।

जो-जो आकर्षण वाला माल होता है, आकर्षक माल होता है, वह सब बिक जाता है। लड़के-लड़कियाँ, सभी बिक जाते हैं!

प्रश्नकर्ता : ऐसा आकर्षण वाला माल किस आधार पर होता है?

दादाश्री : मोह ज़्यादा होता है, इसलिए फिर माल ऐसा आकर्षक होता है। उसे मूर्छित कहा जाता है। मोह कम होने के बाद फिर सभी अंग सुडौल होते हैं, लेकिन चमड़ी आकर्षक नहीं होती। सुडौल होते हैं इसलिए वे सुंदर कहे जाते हैं। चमड़ी आकर्षक हो तो उसे रूप नहीं कहते। वह तो एक तरह का बाज़ारू माल कहलाता है। जिसकी खरीदारी-बिक्री होती ही रहती है।

मोह प्रकृति, वही आकर्षक चमड़ी है। मोही प्रकृति वालों की आँखें भी विकारी होती हैं। और फिर आज के लोग क्या मानते हैं कि, 'मैं कितना सुंदर हूँ!' अरे! तेरी कीमत ही नहीं है दुनिया में! प्रभाव नहीं पड़ता। बल्कि, देखते ही ऐसा भाव होता है कि जो अधोगति में ले जाए और जो ज्ञान हो, वह भी चला जाए।

मोहनीय कर्म की वजह से बेसुध

रूप ऐसा है कि वह इंसान को आकर्षित कर देता है। रूप ऐसा है कि असल ब्रह्मचारी को भी आकर्षित कर देता है।

मोह करने जैसी चीज़ नहीं है फिर भी हमें उसके प्रति आकर्षण होता है। चश्मों के खराब होने की वजह से। द्रव्यकर्म चश्मे जैसे हैं। जिसके जैसे चश्मे हैं, वैसा ही उसका स्वरूप।

अब ज्ञानावरण और दर्शनावरण, ये दोनों द्रव्यकर्म हैं। इन दोनों की वजह से मोहनीय उत्पन्न हुआ है, दिखना बंद हो गया है, अनुभव होना बंद हो गया है अर्थात् यही मोह है। उसी में कुछ अच्छा दिखा तो वहीं पर चिपक पड़ता है। जैसे कि कीट-पतंगे हैं न, वे लाइट पर चिपक जाते हैं, उसी प्रकार यह भी हर किसी जगह पर चिपक पड़ता है। यह मोहनीय कर्म तीसरे प्रकार का द्रव्यकर्म है। वह कोई चीज़ देखते ही क्यों उसके प्रति एकदम से आकर्षित हो जाता है? वह इसलिए क्योंकि मोहनीय कर्म है।

बाज़ार में जाए तो पटाखे लिए बगैर नहीं रहता। नहीं गया होता तो कुछ भी नहीं लेता। नहीं देखता तो कुछ भी नहीं था। देखते ही मोह उत्पन्न हो जाए, वह मोहनीय कर्म है। मूर्छित हो जाता है, खुद अपने आप को भूल जाता है। 'मेरे पास क्या सुविधा है या फिर यह उधार हो गया है या नहीं,' वह भी भूल जाता है।

आकर्षण है प्रकट अग्नि

प्रश्नकर्ता : यह तो संयोगों को टालने की बात हुई न? तो फिर एक स्थान पर ही बैठे रहना चाहिए?

दादाश्री : नहीं, अपना विज्ञान तो अलग ही तरह का है, अपने लिए तो 'व्यवस्थित में जो

हो, सो भले हो', लेकिन वहाँ पर आज्ञा में रहना चाहिए। जहाँ अंगारे हों, वहाँ आज्ञा में नहीं रहते? अंगारों को भूल से भी नहीं छूते हो न? उसी प्रकार यहाँ विषयों में भी संभालना चाहिए कि ये अंगारे हैं, प्रकट अग्नि है। जो-जो चीज़ें इस जगत् में आकर्षण वाली हैं, वे सब प्रकट अग्नि हैं। वहाँ सावधान रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : उसका मतलब यह हुआ कि हम जिसे देखते हैं, वह अपना नहीं है फिर भी उसके प्रति जो भाव होता है, वह नहीं होना चाहिए, ऐसा?

दादाश्री : वह अपना है ही नहीं। *पुद्गल* (पूरण और गलन होता है) अपना हो ही नहीं सकता। यदि अपना यह *पुद्गल* ही अपना नहीं है, तो उसका *पुद्गल* अपना कैसे हो सकता है?

आकर्षण, प्रकट अग्नि है। भगवान ने आकर्षण को तो मोह कहा है। मोह की जड़ ही आकर्षण है। ऐसा सब समझकर *लक्ष* (जागृति) में रखना चाहिए न? हमें दवाई के बारे में तो जान लेना चाहिए न कि इसकी दवाई कौन सी है?

यह विज्ञान है। संपूर्ण भाव से विज्ञान है। अंगारों को क्यों नहीं छूते? वहाँ क्यों सतर्क रहते हो? क्योंकि उसका फल तुरंत ही मिल जाता है। और विषय में तो लालच होता है, इसलिए लालच से फँसता है। अंगारों को छूना अच्छा है। उसका उपाय है। उस पर कुछ भी लगाने से ठंडक हो जाती है। लेकिन विषय तो आज लालच में फँसाकर अगले जन्म के कर्म बाँध लेता है। यह तो अपने ज्ञान को भी धक्का मारने वाला है, इतना बड़ा विज्ञान है, उसे भी धक्का मार दे, ऐसा है! इसलिए सावधना रहना!

सिर्फ यह विषय ही ऐसा है। बाकी का सब भले ही रहा। जीभ के विषय वगैरह, वे सभी दावा नहीं करते। वह चेतन के साथ नहीं है। वह अचेतन है और यह तो मिश्रचेतन है। इसलिए इस विषय में तो आपकी इच्छा नहीं हो फिर भी वश में होना पड़ता है, वर्ना वह दावा कर सकती है और कभी भटका भी सकती है। अत: इसमें बहुत जागृति रखना। यह विषय है ही ऐसा कि भटका दे। हमने जो आत्मा दिया है, उसे भी फिकवा दे।

अब्रह्मचर्य में रमणता से पतन

यदि इंसान केवल इतना ही संभाल ले तो कोई भी विषय से संबंधित आकर्षण हो जाए तो अगर वहाँ पर तुरंत ही प्रतिक्रमण कर ले तो आगे उसका खाता बिल्कुल साफ रहेगा। ज़रा दो मिनट भी देर कर दे तो फिर उग निकलेगा। स्त्री या विषय में रमणता की जाए, ध्यान किया जाए, निदिध्यासन किया जाए तो वह गांठ पड़ जाएगी, विषय की। फिर कैसे खत्म होगी वह? तो वह यह कि, विषय विरुद्ध विचारों से खत्म हो जाएगी।

यह आकर्षण क्यों होता है कि पहले की अज्ञानता से। हमें समझ नहीं थी इसलिए उसके साथ रमणता की थी, इसलिए फिर से आकर्षण खड़ा हो जाता है। अत: हमें समझ जाना चाहिए कि अब इसका कुछ हिसाब है।

प्रश्नकर्ता : वह पता तो चलता है लेकिन फिर भी बार-बार विचार आते रहते हैं।

दादाश्री : हाँ। विचार आए बिना कभी भी आकर्षण नहीं होता। आकर्षण होने वाला हो, तब भीतर विचार आते हैं। विचार मन में से आते हैं, और मन गांठों का बना हुआ है। जिसके विचार अधिक आएँ, वह गांठ बड़ी होती है।

लेकिन विचार आएँ तो फिर से उन्हें, वे जो विचार आएँ, उन सब को तोड़ना पड़ेगा। जैसे-जैसे आते जाएँ, वैसे-वैसे तोड़ते जाना है,

आते जाएँ वैसे-वैसे तोड़ते जाना है। हर एक (विचार) को देखकर प्रतिक्रमण करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : वह समझ में तो आता है कि कितनी बड़ी गलती की थी!

दादाश्री : लेकिन गलती तो की, थी तभी तो अंदर आया न! एक विचार तक भी आए तो उसे कैसे तोड़ना, उतना आना चाहिए! उसे उसमें पूरा दिन गुज़ारना पड़ेगा, दो-दो घंटे। तब छेदन होगा वर्ना नहीं। उन्हें (कर्म) बाँधते समय कुछ सोचा ही नहीं था न! पूरी रात उल्टा लेटकर फिर विचार करता रहा।

प्रश्नकर्ता : 'उल्टे लेटकर विचार करते हैं' इसका मतलब समझ में नहीं आया।

दादाश्री : उसे कुछ अट्रैक्टिव लगा इसलिए फिर वहाँ वह उल्टा लेटकर सोचता ही रहता है। बाद में वह रमणता करता रहता है। अब वह तो चली गई तो अब क्यों रमणता कर रहा है? भाई उल्टा लेटकर रमणता करता है। अंदर उसका टेस्ट आता है एक तरह का। अब यदि रमणता ब्रह्मचर्य में रहे, तो फिर कार्य ब्रह्मचर्य होगा। पतन कब होता है? जब से अब्रह्मचर्य में रमणता होने लगे तब से होता है।

तेरी इस तरह की कोई दखल नहीं है न, श्री विज़न रहता है न?

प्रश्नकर्ता : फिर भी कभी कभार कच्चा पड़ जाता है।

दादाश्री : ऐसा! उस समय बायें हाथ से दाहिने गाल पर थप्पड़ मार देता है?! तब क्या करता है? 'क्या समझता है?' कहकर एक लगा देना।

विषय रमणता की हो तो प्रतिक्रमण करके उसे धो देना। बाद में दांत-वांत तोड़ दें तो क्या दिखेगा, ऐसा सब देखना चाहिए। श्री विज़न तो कहलाएगा न।

प्रश्नकर्ता : लेकिन श्री विज़न देखने के बावजूद भी वह बार-बार याद आता है।

दादाश्री : यह याद, वह तो मन का काम है, तेरा क्या जाता है? तुझे 'देखते' ही रहना है।

प्रश्नकर्ता : तो इस पर से ऐसा लगता है कि अभी तक वह टूटा नहीं है।

दादाश्री : टूटेगा कैसे लेकिन? वह तो उसका सारा ज़ोर निकल जाएगा, तब अलग होगा। तब तक जितना ज़ोर भरा हुआ है, उसे हमें देखते ही रहना है।

प्रश्नकर्ता : लंबे समय तक विचार आएँ तो उनमें तन्मयाकार हो जाते हैं।

दादाश्री : विचार तो आएँगे, वह तो, जितना लंबा है उतने विचार आते ही रहेंगे। उनका हिसाब खत्म हो जाएगा तो मन बंद हो जाएगा, वह फिर दूसरा पकड़ लेगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह हिसाब कब पूरा होगा?

दादाश्री : अभी तो बहुत सारा है। बेहिसाब! अभी तो कोई हिसाब ही नहीं है। अभी तो इस पहाड़ का पहला पत्थर हटा है। लेकिन जो यहाँ से तुरंत काट दे, उसके लिए फिर कुछ खास नहीं रहेगा। दिखाई दे, तभी से प्रतिक्रमण करे और फिर किसी रमणता में नहीं पड़े, रात को, कहीं भी। ज़रा सा भी उसका विचार आया कि रमणता में पड़ा, तो उसे नीचे स्लिप हुआ (फिसलना) कहलाएगा। रमणता से ही ये सारे दोष उत्पन्न हुए हैं न! इसलिए उल्टे होकर फिर उसमें भोग लेते हैं, वह मैं देखता हूँ न!

दृष्टि बदलने के बाद रमणता शुरू होती है। दृष्टि बदले तो, उसका भी कारण है। उसके पीछे

पिछले जन्म के कॉज़ेज़ (कारण) हैं। इसलिए हर किसी को देखकर दृष्टि नहीं बदलती। कुछ खास लोगों को देखने पर ही दृष्टि बदलती है। कॉज़ेज़ हों, उसका पहले का हिसाब चल रहा हो और बाद में रमणता हो जाए तो समझना कि बहुत बड़ा हिसाब है। अत: वहाँ पर अधिक जागृति रखनी चाहिए। उसके सामने प्रतिक्रमण के तीर चलाते रहना। ज़बरदस्त आलोचना-प्रतिक्रमण और प्रत्याख्यान, होते रहने चाहिए।

अत: यह तो प्रतिक्रमण से बंद होगा वर्ना यह तो बंद ही नहीं होगा न! फिर भी अगर पतन हो जाए तो जोखिमदारी नहीं रहेगी। लेकिन जहाँ पर भान ही नहीं रहे, वहाँ पर फिर आकर्षण हुआ तो फिर वहाँ सबकुछ ज्यों का त्यों पड़ा रहेगा। अत: देखते ही आकर्षण हो जाए, उसी के साथ उसके लिए आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान हों और खराब विचारों को काटें तो बच सकेंगे, वर्ना कोई बचेगा ही नहीं इससे। यानी बहुत गहरा गड्ढा है यह तो।

आकर्षण क्या है, वह समझने पर रह सकते हैं सतर्क

आकर्षण से ही यह पूरा जगत् खड़ा है। इसमें भगवान को कुछ करने की ज़रूरत नहीं पड़ी, मात्र आकर्षण ही है! यह स्त्री-पुरुष का जो है न, वह भी मात्र आकर्षण ही है। पिन और चुंबक में जैसा आकर्षण है, वैसा ही यह स्त्री-पुरुष के बीच का आकर्षण है। सभी स्त्रियों के प्रति आकर्षण नहीं होता। समान परमाणु मिलते आएँ, तब उस स्त्री के प्रति आकर्षण होता है। आकर्षण होने के बाद खुद ने तय किया हो कि मुझे नहीं खिंचना है तो भी खिंच जाता है। वहाँ पर क्या सोचना नहीं चाहिए कि मुझे आकर्षित नहीं होना है? फिर भी आकर्षण क्यों उत्पन्न होता है? इसलिए 'देयर आर सम कॉज़ेज़' (वहाँ कुछ कारण हैं), वे 'मैग्नेटिक कॉज़ेज़' (चुंबकीय कारण) हैं!

प्रश्नकर्ता : वे पूर्वजन्म के हो सकते हैं?

दादाश्री : वह आकर्षण, हमारी इच्छा नहीं है फिर भी होता है, उसका मतलब ही पूर्वजन्म का है। इसे भी मैग्नेटिक हो चुका है और स्त्री को भी मैग्नेटिक हो चुका है। पूर्वजन्म में सूक्ष्म रूप में होता है और यहाँ स्थूल रूप में होता है। अत: फिर स्वाभाविक रूप से आकर्षण होता ही है। अब आकर्षण होता है, तब आपको मन में ऐसा लगता है कि, 'मैं खिंच गया।' लेकिन जब आप अपना स्वरूप जान जाओगे, उसके बाद आपको ऐसा लगेगा कि 'चंदूभाई' आकर्षित हो गए।

प्रश्नकर्ता : यह जो आकर्षण होता है, वह कर्म के अधीन है या नहीं?

दादाश्री : कर्म के अधीन तो पूरा ही जगत् है, लेकिन सामने वाले के परमाणु और अपने परमाणु एक जैसे होंगे तभी आकर्षण होता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसमें कर्म का उदय तो है ही न?

दादाश्री : कर्म के उदय से तो यह पूरा जगत् है। उस एक फ़ैक्टर में तो सभी कुछ आ गया, लेकिन उसे डिवाइड करो तो इस प्रकार से अलग है कि अपने परमाणु के साथ सामने वाले के परमाणु मेल खाएँ तभी आकर्षित होता है, वर्ना आकर्षित नहीं होता।

आकर्षण होना, यह चीज़ ऐसी है न कि उनके परमाणुओं का आमने-सामने हिसाब है, इसलिए खिंचते हैं! अभी जो राग उत्पन्न होता है, वह वास्तव में राग नहीं है। ये जो चुंबक और पिन होते हैं, तो उस चुंबक को ऐसे घुमाने से पिन इधर-उधर होती है। उन दोनों में कहीं जीव नहीं है, फिर भी चुंबक के गुणों के कारण दोनों में केवल आकर्षण रहता है। उसी प्रकार जब

समान परमाणु होते हैं न, तब इस देह को उसीके प्रति आकर्षण होता है।

आकर्षण ही आसक्ति

प्रश्नकर्ता : स्त्री के प्रति जो आकर्षण होता है, वह 'आसक्ति' है लेकिन आसक्ति में आत्मा का एकाकार होना, वह 'राग' है। इसमें आप क्या कहना चाहते हैं?

दादाश्री : आसक्ति किसके जैसी है? यह चुंबक होता है और यह आलपिन यहाँ पड़ी हो और चुंबक ऐसे-ऐसे करें तो आलपिन हिलती है या नहीं? हिलती है। चुंबक पास में रखें तो आलपिन उससे चिपक जाती है। उस आलपिन में आसक्ति कहाँ से आई? उसी प्रकार इस शरीर में चुंबक नाम का गुण है। क्योंकि अंदर इलेक्ट्रिकल बॉडी है, इसलिए उस बॉडी के आधार पर सारी इलेक्ट्रिसिटी पैदा हुई है। उससे शरीर में चुंबकीय गुण उत्पन्न होता है, तब जहाँ खुद के परमाणुओं से मिलते जुलते परमाणु आएँ, वहाँ आकर्षण खड़ा होता है और दूसरों के साथ कुछ भी नहीं। उस आकर्षण को लोग 'राग'-द्वेष कहते हैं। कहेंगे, 'मेरी देह खिंचती है।' अरे! तेरी इच्छा नहीं तो देह क्यों खिंचती है? इसलिए 'तू कौन है' वहाँ पर?!

हम शरीर से कहें, 'तू जाना मत', तब भी उठकर चलने लगता है। क्योंकि परमाणुओं से बना हुआ है न, परमाणुओं का खिंचाव है यह। मेल खाते परमाणु आएँ वहाँ यह देह खिंच जाती है। नहीं तो अपनी इच्छा न हो तब भी यह देह कैसे खिंच जाए। यह देह खिंच जाती है, उसे इस जगत् के लोग कहते हैं, 'मुझे इस पर बहुत राग है।' हम पूछें, 'अरे! तेरी इच्छा खिंचने की है?' तो वे कहेंगे, 'ना, मेरी इच्छा नहीं है, तब भी खिंच जाता हूँ।' तो फिर यह राग नहीं है। यह तो आकर्षण का गुण है। इसलिए यह देह खिंचती है न, वह देह क्रियाशील बनती है। यह सब परमाणु का ही आकर्षण है।

इसीलिए बेटे पर सिर्फ आसक्ति ही है। परमाणु मेल खाते हैं। तीन परमाणु अपने और तीन परमाणु उसके, ऐसे परमाणु मेल खाएँ तब आसक्ति होती है। मेरे तीन और आपके चार हों तो कुछ भी लेना-देना नहीं। यानी विज्ञान है यह सब तो। आसक्ति तो अबॉव नॉर्मल और बिलो नॉर्मल भी हो सकती है। प्रेम नॉर्मेलिटी में होता है, एक सरीखा ही होता है, उसमें किसी भी प्रकार का बदलाव होता ही नहीं।

व्यवहार में अभेदता रहे, उसका भी कारण होता है। वह तो परमाणु और आसक्ति के गुण हैं, पर उसमें कौन से क्षण क्या होगा वह कहा नहीं जा सकता। जब तक परमाणु मेल खाते हों तब तक आकर्षण रहता है, उसके कारण अभेदता रहती है। और परमाणु मेल न खाएँ तो विकर्षण होता है और बैर होता है। इसलिए आसक्ति हो, वहाँ बैर होता ही है। आसक्ति में हिताहित का भान नहीं होता। प्रेम में संपूर्ण हिताहित का भान होता है।

यदि सिर्फ आकर्षण ही हो तो उसे पसंद करते हैं, लेकिन फिर से विकर्षण होगा। थोड़ी देर अच्छा लगता है, फिर वापस कड़वा लगता है। पुरुष, कितना भी सुंदर हो, लेकिन स्त्री को यदि दो शब्द उल्टे बोल दिए, कि, 'तू बेअक्ल है' तो फिर स्त्री को ऐसा होता है कि, 'मुझे बेअक्ल कहा?' तब फिर कड़वा लगता है। यानी सिर्फ आकर्षण ही नहीं है इस जगत् में। आकर्षण और विकर्षण दोनों ही हैं, यह द्वंद्वरूपी है! यह जगत् द्वंद्वरूपी ही है। इसलिए सिर्फ आकर्षण ही नहीं होता। विकर्षण भी है ही। विकर्षण नहीं होगा तो फिर से आकर्षण होगा ही नहीं और यदि सिर्फ आकर्षण ही होगा, तब भी लोग ऊब जाएँगे।

आकर्षण में से विकर्षण होता ही है

प्रश्नकर्ता : अर्थात् यह उसका नियम ही है कि यदि आकर्षण हुआ तो फिर उसका ऐसा विकर्षण परिणाम आएगा ही।

दादाश्री : आकर्षण-विकर्षण, यह नियम ही है। आकर्षण कब तक कहलाएगा? विकर्षण जब तक इकट्ठा नहीं होता, तब तक फल नहीं देता है। विकर्षण का संयोग इकट्ठा हुआ कि फल देना शुरू कर देगा।

प्रश्नकर्ता : आकर्षण फल देना शुरू कर दे तो, उसके बाद क्या होता है?

दादाश्री : फिर खत्म हो गया! इंसान मर ही गया। स्पर्श हो जाए या ऐसा वैसा कुछ हो जाए तो आकर मुझे बता देना तो मैं तुरंत साफ कर दूँगा।

प्रश्नकर्ता : नहीं। वह कभी भी, कहीं भी नहीं।

दादाश्री : लेकिन गलती से ऐसा हो जाए तो आकर तुरंत मुझे बता देना क्योंकि एक ही टच से अंदर इलेक्ट्रिसिटी का जो अट्रैक्शन होता है, वह इलेक्ट्रिसिटी फिर हमें निकालनी पड़ेगी।

प्रश्नकर्ता : वह इलेक्ट्रिसिटी कैसी होती है? आपने कहा न कि 'इलेक्ट्रिसिटी ऐसी होती है कि मुझे धोनी पड़ेगी।'

दादाश्री : उसके परमाणुओं का असर हो जाता है। अट्रैक्शन के परमाणु बढ़ते जाते हैं और आँखों से देखा, उसके परमाणु सूक्ष्म होते हैं और सूक्ष्म में से स्थूल खड़ा होता है और फिर उसमें से आकर्षण होता है। आकर्षण बढ़ता ही जाता है। आकर्षण बढ़कर फिर उसका विकर्षण होता है। विकर्षण शुरू होना हो, तब पहले कार्य होता है। फिर विकर्षण होता रहता है। कार्य शुरू हुआ, तभी से विकर्षण शुरू होता है। कार्य की शुरुआत तक आकर्षण होता रहता है और कार्य पूरा हो जाने पर विकर्षण होता रहता है। परमाणुओं का अट्रैक्शन ऐसा हैं।

प्रश्नकर्ता : तो उस स्पर्श से परमाणु उसे नीचे कहाँ तक घसीटकर ले जाते हैं?

दादाश्री : हाँ, मतलब परमाणु का अट्रैक्शन ही सब कामकरता है। उस बेचारे के तो हाथ में ही नहीं रहती सत्ता और जब विकर्षण होता है, तब उसे अलग नहीं होना हो फिर भी वे परमाणु ही खुद विकर्षण करवाते हैं, अलग करवा देते हैं।

प्रश्नकर्ता : विकर्षण होता है तब खुद परमाणु ही अलग करवा देते हैं।

दादाश्री : हाँ, खुद ही विकर्षण करवा देते हैं, उसे अमल देकर।

प्रश्नकर्ता : मतलब वह कैसे?

दादाश्री : उसका अमल फल देकर और खुद ही विकर्षण रूपी बन जाता है।

सिद्धांत, आकर्षण व विकर्षण का

यह पूरा जगत् परमाणुओं से ही भरा हुआ है। जगत् का स्वभाव ही ऐसा है कि एक सरीखे परमाणुओं के बीच आकर्षण होता है। विकर्षण-आकर्षण परमाणुओं का है। परमाणु के एक सिरे पर पॉज़िटिव और दूसरे सिरे पर नेगेटिव है।

पॉज़िटिव और नेगेटिव के मिलने पर ही परमाणुओं का आकर्षण होता है।

यदि कोई व्यक्ति हमें बहुत याद आता रहे, तो उसका रोग हमारे अंदर घुस जाता है। आपको जिसके बहुत विचार आते हैं, उसके परमाणु आप में घुस जाते हैं। याद आना अर्थात् अनुकूल परमाणु अट्रैक्ट (आकर्षित) करता है वह। जब वे परमाणु खत्म हो जाएँगे तब याद आना बंद हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : किसी से अलग होते हुए, आँखों में से जो पानी निकल जाता है, वह क्या है?

दादाश्री : वह सब परमाणुओं की वजह से ही है। यदि आकर्षण के परमाणु हों तो अलग होते समय आँखों में से पानी आता है और विकर्षण के परमाणु हों तो अलग होते समय आनंद होता है।

विकर्षण में जाग्रत रहता है। आकर्षण में गच्चा खा जाता है। आकर्षण *पुद्गल* का गुण है। एक परमाणु दूसरे परमाणु से मिलता-जुलता हो, तो खींचता है। देह-मन व चित्त परमाणुओं से बने हुए हैं इसलिए खिंचते हैं। कितनी ही जगहों पर विकर्षण भी होता है।

प्रश्नकर्ता : यह सब कौन निश्चित करता है कि इस शरीर में यह आत्मा जाएगा और इस शरीर में यह आत्मा जाएगा?

दादाश्री : हमें निश्चित करने की ज़रूरत नहीं है। जब खुद के हिसाब वाले परमाणु मिलते हैं तब आकर्षण से वहाँ पर चला जाता है। यह पूरा जगत्, सिर्फ आकर्षण से ही चल रहा है।

प्रश्नकर्ता : शरीर और आत्मा का आकर्षण किस तरह से होता है?

दादाश्री : शरीर और आत्मा के बीच आकर्षण है ही नहीं। आत्मा किसी भी जगह पर आकर्षित नहीं होता। आत्मा के साथ जो दूसरी वस्तुएँ हैं, उन वस्तुओं के आकर्षण की वजह से वह खिंच जाता है। तरह-तरह के अभ्यास हो चुके हैं। यदि बहुत काल तक आकर्षण होता रहे तो उसी से विकर्षण होता है। वह आत्मस्वभाव नहीं है, पौद्गलिक स्वभाव है। आकर्षण परमाणुओं का गुण है लेकिन जब तक ज्ञान नहीं मिले तब तक आकर्षण नहीं कहा जाएगा। क्योंकि उसके मन में तो ऐसा ही लगता है कि, 'यह मैंने ही किया है', और यदि ज्ञान मिल गया हो तो उसके मन में ऐसा लगेगा कि शरीर आकर्षण से खिंच रहा है और मैंने कुछ नहीं किया है, मैं तो सिर्फ जानता हूँ।

आकर्षण, वह पुद्गल की करामात

यह सारा ही परमाणुओं का आकर्षण है। आकर्षण-विकर्षण में दो प्रकार के परमाणु हैं। जो द्वेष के परमाणु भरकर लाया है, वह द्वेष करता है। जो राग के परमाणु लाया है, वह राग करता है। लोग *पुद्गल* के आकर्षण को राग कहते हैं। राग वास्तव में राग नहीं है परंतु मान्यता की भूल है। राग, वह एक सरीखे स्वभाव वाले परमाणुओं का आकर्षण नामक गुण है। वह तो *पुद्गल* की करामात है।

राग-द्वेष, वे तो आत्मा की वृत्ति के सामने आकर्षण-विकर्षण हैं। जहाँ आकर्षण के सामने रुकावट आए, वहाँ पर द्वेष होता है।

प्रश्नकर्ता : राग-द्वेष सजातीय और विजातीय के कारण हैं?

दादाश्री : चुंबक जैसा है। राग बहुत अलग ही चीज़ है। जीवित लोगों के प्रति जो आकर्षण होता है, लोग उसे 'राग' कहते हैं, लेकिन वह वीतरागों की भाषा का 'राग' नहीं है। परमाणुओं का आकर्षण है, तो उसे 'राग' कहते हैं और विकर्षण को 'द्वेष' कहते हैं।

आकर्षण, वह पुद्गल का चुंबकत्व गुण

प्रश्नकर्ता : राग-(द्वेष), अहंकार का परिणाम है और आकर्षण *पुद्गल* का गुण है।

दादाश्री : राग, अहंकार का गुण है। राग और द्वेष दोनों ही अहंकार के गुण हैं। आकर्षण, *पुद्गल* का गुण कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : 'जिसका' अहंकार चला गया हो, क्या 'उसे' *पुद्गल* का आकर्षण रहता है?

दादाश्री : 'उसे' खुद को नहीं रहता, लेकिन *पुद्गल* को *पुद्गल* का आकर्षण रहता है। यदि 'तेरा' अहंकार चला गया है तो तुझ पर असर नहीं होगा लेकिन चंदू को होगा। यह ज्ञान मिलने के बाद नया रस उत्पन्न नहीं होता। जब तक पुराना रस संपूर्ण रूप से खिंच नहीं जाता तब तक निबेड़ा नहीं आएगा। जहाँ पर नया रस उत्पन्न हो रहा हो, वहाँ पर संसार है। यह तो इफेक्ट ही है सिर्फ। ये कॉज़ेज़ नहीं हैं, *निकाली* चीज़ है यह। जहाँ कॉज़ेज़ और इफेक्ट, दोनों साथ में हों, उसे कहते हैं संसार।

हम सोने की परिभाषा नहीं समझें और पीतल को सोना कहें तब तो फिर यही कहा जाएगा न, कि हम उसकी कीमत ही नहीं समझे हैं? बफिंग करने पर पीतल भी सोने जैसा ही दिखाई देता है लेकिन सोने की परिभाषा गुण सहित समझनी चाहिए। उसी प्रकार से आकर्षण क्या है? विकर्षण क्या है? वे सब *पुद्गल* परमाणुओं के गुण हैं। यह पूरा साइन्स है। साइन्स अर्थात् एक्ज़ेक्टली (जैसा है वैसा) समझ लेना चाहिए। बात को सूक्ष्मता से समझ लेने की ज़रूरत है। कुछ भी करने की ज़रूरत नहीं है।

जिसे भीतर अच्छा नहीं लगता वही छूट पाता है

प्रश्नकर्ता : विषय राग से भोगते हैं या द्वेष से?

दादाश्री : राग से। उस राग में से द्वेष उत्पन्न होता है। यह मिश्रचेतन तो 'फाइल' कहलाती है, लेकिन पूर्वजन्म का हिसाब बंध चुका है, 'देखतभूली' का हिसाब बंध चुका है, इसलिए उससे बच ही नहीं सकता न! उसकी इच्छा नहीं हो, आज तय किया हो, फिर भी शाम को जा पहुँचता है, बच ही नहीं सकता। वह आकर्षण से खिंच जाता है। अंदर से वह आकर्षण होता है और खुद यह समझता है कि, 'मैं गया'। नहीं जाना हो फिर भी चला जाता है। इसका क्या कारण है? कि वह आकर्षण से खिंच जाता है।

प्रश्नकर्ता : जो मिश्रचेतन से संबंधित फाइल होती है, उसमें एक ओर जागृति भी रहती है, एक ओर मन में मिठास भी लगती है, दूसरी ओर वह अच्छा नहीं लगता। ज्ञान मना करता है कि यह सब योग्य नहीं है। इसलिए द्विधा होती रहती है।

दादाश्री : वह पसंद नहीं है, उसका मतलब कि वह छूट रहा है! पसंद नहीं हो फिर भी वह करार पूरा करना चाहिए न? जो पसंद नहीं हो वह फिर चिपकता ही नहीं है। ज्ञान प्रकट होने के बाद जो नापसंद है वह चिपकता ही नहीं। अंदर ज़रा पसंद हो तभी चिपकता है। जो पसंद नहीं हो, वह चिपकता भी नहीं और ज़्यादा दिन टिकता भी नहीं है। एक-दो साल में, पाँच सालों में फिर हल आ जाता है।

देह की चंचलता के सामने मज़बूत रहना चाहिए

जहाँ आकर्षण होता है, वहाँ जाग्रत रहो। आकर्षण नहीं हो रहा हो तो हर्ज नहीं है। बार-बार आकर्षण हो रहा हो तो समझना कि यह फाइल है।

प्रश्नकर्ता : कुछ फाइलों के प्रति आकर्षण होता है।

दादाश्री : सावधान रहकर चलना। अपना यह ज्ञान है तो ब्रह्मचर्यव्रत रह सकता है क्योंकि शुद्धात्मा को अलग कर दिया है इसलिए रह सकता है। वर्ना और कहीं नहीं रह सकता। दादा द्वारा दिया गया, 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा कहते ही वह कम्प्लीट अलग हो जाता है। वह शंका रहित है। बाकी सब जगह शंका वाला।

प्रश्नकर्ता : 'खुद' अलग रहता है इसीलिए यह सब पता चल पाता है कि यह कोई फाइल आई और चंचलता हुई।

दादाश्री : हाँ, पता चलेगा ही न। वह अलग नहीं हुआ होता तो पता नहीं चल पाता, तन्मयाकार ही रहता। (खुद जुदा रहे तो) पता चलता है। हिल गया, ऐसा समझ में आता है। अब सब कैसे करना है, वह भी जानता है। सभी संयोगों (को हल करना) आता है।

तेरा ठीक रहता है या फिर सब यों ही? अभी भी चंचल हो जाता है न?

प्रश्नकर्ता : मेरे साथ ऐसा कुछ हुआ ही नहीं।

दादाश्री : ऐसा हुआ है। मैं तो चंचलता को देखता हूँ न! तुझे पता नहीं चलता। देह चंचल हो जाए, ऐसा तुझे पता नहीं चलता। मैं पहचान जाता हूँ न, चंचलता को!

प्रश्नकर्ता : मन बिगड़ जाए, तब खुद को पता चलता है न?

दादाश्री : मन बिगड़े, विचार बिगड़े तो तुझे पता चल जाता है। लेकिन यदि देह चंचल हो जाए तो उसका यों पता नहीं चलता। देह चंचल हो जाती है। उसके सामने देखने की शक्ति होनी चाहिए। मज़बूत ही रहना चाहिए। यह तो अच्छा लगता है। बिल्कुल मज़बूत, अग्नि समझकर अलग रहना पड़ेगा।

सामायिक में विलय होते हैं देह के आकर्षण

प्रश्नकर्ता : देह का आकर्षण बहुत रहा करताहै।

दादाश्री : वह जो आकर्षण रहा करता है, उसमें सिर्फ जागृति रखनी है। हमने आपको जो वाक्य दिया है न कि 'मन-वचन-काया की तमाम संगी क्रियाओं से मैं बिल्कुल असंग ही हूँ।' वह जागृति रहनी चाहिए, और वास्तव में एक्ज़ेक्टली ऐसा ही है। वह सब *पूरण-गलन* है। आप अगर यह जागृति रखोगे तो आपको कर्म बंधन नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : जागृति नहीं रहे, तभी राग होता है न?

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं है। अब तुम्हें राग होता ही नहीं है। यह जो होता है, वह आकर्षण है।

प्रश्नकर्ता : यह जो होता है, वह आकर्षण है, वह कमज़ोरी नहीं माना जाएगा?

दादाश्री : नहीं, कमज़ोरी नहीं मानी जाएगी। उसका और आत्मा का कोई लेना-देना नहीं है। सिर्फ इतना ही है कि वह तुम्हें खुद का सुख नहीं आने देगा। इसलिए एक-दो जन्म अधिक करवाएगा। उसका भी उपाय है। अपने यहाँ ये सब लोग जो 'सामायिक' करते हैं। सामायिक में उस विषय (दोष) को लेकर खुद ध्यान करे तो वह विषय विलीन होता जाता है, खत्म हो जाता है। जो-जो आपको विलीन कर देना हो, उसे यहाँ पर विलीन किया जा सकता है।

आपके लिए जो विषय बाधक है उसी को सामायकि में देखना है और उसे देखते रहना है। सिर्फ देखने से ही वे सब गाँठें विलय हो जाएँगी।

हटा लेने हैं, खुद के राग-द्वेष वाले भाव

प्रश्नकर्ता : पर दादा, शरीर के परमाणुओं में तो आकर्षण-विकर्षण रहेंगे ही, उन्हें निकालने का प्रयत्न करना, वह तो बल्कि उल्टी दिशा में चलने जैसा है।

दादाश्री : नहीं, उन्हें निकालने का नहीं सोचना है। उन्हें निकालना ही नहीं है, निकलेंगे

ही नहीं। उनमें से अपना भाव खींच लेना है। ये राग-द्वेष के भाव खींच लेने हैं। अर्थात् वीतरागता रखनी हैं हमें, बस। वे परमाणु तो अपना असर दिखाते ही रहेंगे।

हमने अंदर जैसे परमाणु भरे हैं, वे परमाणु वैसा ही फल देंगे। इसलिए हम कहते हैं न, कि जो भी होता है, उसका *निकाल* (निपटारा) करो। जैसा भरा है, वैसा निकलेगा। खिंच (निकल) क्या गया है? तो वह है, उस पर जो अपने राग-द्वेष थे, सिर्फ वे निकल गए। जिसे राग-द्वेष नहीं होते, वह वीतराग कहलाता है।

ज़रूरी है प्रतिक्रमण, आकर्षण के सामने

जहाँ आकर्षण, वहाँ मोह। जहाँ हमारी आँखे खिंचें, जहाँ पर अंदर बहुत ही आकर्षण होता रहे, वहाँ मोह होता ही है। इसलिए शास्त्रकारों ने बहुत सावधान किया है कि आकर्षण वाली जगह पर उपयोग रखना, शुद्ध उपयोग रखना तो वह जगह आपको परेशान नहीं करेगी। वर्ना वह तो आकर्षण वाली जगह है। फिसलन वाली जगह पर हम क्या करते हैं?

प्रश्नकर्ता : वहाँ सावधान रहकर चलते हैं।

दादाश्री : वहाँ आप जागृति नहीं रखते? और लोग आवाज़ें भी देते हैं, 'अरे! चंदूभाई फिसल जाओगे, जरा संभलकर चलना।' उसी प्रकार यह भी बड़ा फिसलन वाला आकर्षण है। अत: यहाँ पर बहुत ही जागृति चाहिए। यहाँ शुद्ध उपयोग रखना। जहाँ आकर्षण होता हो, वहाँ शुद्धात्मा देखकर, प्रतिक्रमण विधि आदि करके सब साफ कर देना। सभी जगह कहीं आकर्षण नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : आकर्षण का प्रतिक्रमण करना पड़ता है?

दादाश्री : हाँ और क्या! आकर्षण-विकर्षण इस शरीर को होता हो तो आपको चंदूभाई से कहना पड़ेगा कि, 'हे चंदूभाई, यहाँ आकर्षण हो रहा है तो प्रतिक्रमण करो।' तो आकर्षण बंद हो जाएगा। आकर्षण-विकर्षण, ये दोनों ही हमें भटकाते हैं। यह *पुद्गल* क्या कहता है कि, 'आप शुद्धात्मा बन गए, उसमें मुझे हर्ज नहीं है, लेकिन आपका मोक्ष कब होगा? हम तो शुद्ध परमाणुओं के रूप में थे लेकिन आपने ही हमें बिगाड़ा है। इसलिए हमें शुद्ध बना दो। जैसे थे वैसे बना दो, तो आप छूट जाओगे। जब तक हमें शुद्ध नहीं करोगे, तब तक आप छूट नहीं पाओगे।' जब तक इस *पुद्गल* का *निकाल* नहीं होगा, तब तक वह छोड़ेगा नहीं। इसीलिए हमने इन सारी फाइलों का समभाव से *निकाल* करने को कहा है, वे परमाणु शुद्ध हो जाएँ, इसलिए कहा है।

पुद्गल की, खुद की ऐसी अलग-अलग शक्तियाँ हैं कि जो आत्मा को आकर्षित करती हैं। उन शक्तियों से ही खुद ने मार खाई है न! आत्मा, *पुद्गल* की शक्ति जानने निकला कि यह क्या है? यह कौन सी शक्ति है? अब उसमें वह खुद ही फँस गया, अब कैसे छूटे? यदि खुद के स्वरूप का भान होगा तो छूटेगा!

श्री विज़न से उखड़े आकर्षण

पुद्गल का स्वभाव यदि ज्ञान से रह पाए तब तो फिर आकर्षण होगा ही नहीं। लेकिन *पुद्गल* का स्वभाव ज्ञान से रह पाए, ऐसा तो होता ही नहीं है न किसी को! *पुद्गल* का स्वभाव, हमें तो ज्ञान से रहता है।

प्रश्नकर्ता : '*पुद्गल* का स्वभाव ज्ञान से रहे तो आकर्षण नहीं रहेगा', यह समझ में नहीं आया।

दादाश्री : मतलब क्या है कि किसी स्त्री ने या पुरुष ने भले ही कैसे भी कपड़े पहने हों,

पर वे कपड़े रहित दिखते हैं, वह ज्ञान से पहला दर्शन है। दूसरा, सेकन्ड दर्शन यानी शरीर पर से चमड़ी निकल जाए, वैसा दिखता है और थर्ड दर्शन यानी (शरीर के) अंदर का सभी कुछ दिखाए ऐसा दिखाई देता है। फिर आकर्षण रहेगा क्या? ऐसा तुझे रहता है?

प्रश्नकर्ता : ऐसा अभ्यास दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है।

दादाश्री : तो अच्छा है। ऐसा अभ्यास करना अच्छा है। लेकिन अनंत जन्मों की जो *पुद्गल* की *खेंच* है, वह जाती नहीं है। वह *खेंच* किस जगह पर नुकसान पहुँचा सकती है? स्त्री-पुरुषों के आकर्षण को लेकर वह *खेंच* नुकसान पहुँचाती है। इसलिए वहाँ पर बहुत ही जागृति रखनी चाहिए।

आकर्षण के सामने रहनी चाहिए जागृति

प्रश्नकर्ता : मन में तय किया हो कि, 'किसी भी लिए खराब विचार नहीं करने हैं' और मुझे खराब विचार नहीं आते लेकिन उसका चेहरा दिखता रहता है, प्रतिक्रमण करती हूँ फिर भी वापस वह तो दिखता ही रहता है तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : वह दिखता रहे तो उससे क्या? हमें (क्या होता है वह) देखते रहना है, (और जुदा रखकर) प्रतिक्रमण करके उखाड़ देना है बस!

प्रश्नकर्ता : उसकी ओर आकर्षण होता है, वह अच्छा नहीं लगता इसलिए उसका प्रतिक्रमण करती है, लेकिन फिर भी वह और भी ज़्यादा दिखता रहता है।

दादाश्री : वह दिखे तब प्रतिक्रमण होगा और प्रतिक्रमण करने से फिर धीरे-धीरे कम होता जाएगा। गांठ बड़ी हो तो एकदम से कम नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : मुझे उसका चेहरा दिखे और उसके बारे में उल्टे विचार आएँ तो क्या वह खराब नहीं कहलाएगा?

दादाश्री : तुम स्ट्रोंग (दृढ़) हो तब फिर अगर उल्टे विचार आएँ, तो उन्हें देखो कि इसके लिए अभी भी बुरे विचार आ रहे हैं। तुम स्ट्रोंग हो तो कोई नाम नहीं लेगा। यह तो जो माल भरा है, वही निकलता है, वर्ना अगर नहीं भरा हो तो दूसरे किसी लड़के के बारे में (विचार) नहीं आएँगे। इतने सारे लड़के हैं, क्या सभी के लिए आते हैं? जो माल भरा है, वही निकल रहा है। तुम पहचानती हो या नहीं, इस भरे हुए माल को? कुछ को देखा हो और उन पर दृष्टि पड़ गई हो तभी आएँगे।

हम तो सभी से कहते हैं कि शादी कर लो। फिर तुम अगर शादी नहीं करतीं तो वह तुम्हारी मर्जी। शादी नहीं करके फिर चारित्र बिगड़े उससे तो शादी कर लेना अच्छा। लोकनिंद्य हो तो, वह सब व्यर्थ है। उससे तो मेरिज कर लेना अच्छा, वर्ना फिर हरहाए (आवारा) पशु जैसा कहलाएगा।

प्रश्नकर्ता : लोकनिंद्य होना, वह तो बाहर की बात हुई, लेकिन खुद का बिगड़ता है न?

दादाश्री : यानी खुद का तो बिगड़ता ही है, लेकिन फिर लोकनिंद्य हो जाए, वहाँ तक का बिगाड़ता है। वह फिर थोड़ा-बहुत नहीं बिगाड़ता। फिसला कि फिर देर ही नहीं लगती न? यदि ब्रह्मचर्य संभाले तो भगवान बनने की तरकीब है उसमें! ज्ञानी तो सारी कलाएँ बताते हैं, सभी रास्ते बताते हैं, लेकिन उसे खुद को स्ट्रोंग रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : खुद स्ट्रोंग रहे, लेकिन फिर क्या आगे जाकर दिक्कत नहीं आएगी?

दादाश्री : नहीं, कुछ नहीं होगा। ज्ञानी पुरुष की कृपा साथ में रहेगी न! खुद स्ट्रोंग रहा तो ज्ञानी

पुरुष की कृपा रहा करेगी, वचनबल रहा करेगा, उससे सभी काम होते रहेंगे। खुद कमज़ोर पड़े तो सबकुछ बिगड़ जाएगा। 'क्या होगा, अब क्या होगा' ऐसा हुआ तो बिगड़ा। 'कुछ भी नहीं होगा' कहा कि सबकुछ चला जाएगा। शंका हुई कि फिसला।

हमारी विधि तो आपको बाहर से नुकसान नहीं होने देगी लेकिन जिसे खुद को ही बिगाड़ना हो तो उसका क्या हो सकता है? अतः अगर निश्चय कर लो तो सही राह पर चलेगा सारा।

प्रश्नकर्ता : निश्चय तो ठीक से किया है। आज्ञा है, ज्ञान है लेकिन पुरुषार्थ में कमी रह जाती है।

दादाश्री : वह सब तो कर देंगे हम। वे सारे कनेक्शन हम करवा देंगे। तेरी इच्छा हो तो हम सारे कनेक्शन करवा देंगे। इन लड़कों को सभी कनेक्शन करवा दिए, तो ज़रा भी विचार नहीं आता। वैसा करके देते हैं हम लेकिन अगर तेरा तय हो जाए, उसके बाद मुझसे कहना।

अंकुर फूटते ही उखेड़ देना आकर्षण को

प्रश्नकर्ता : यह जो दो पत्तियों की अवस्था में ही उखाड़ने का विज्ञान है, कि 'विषय की गांठ फूटे, तब दो पत्तियों से ही उखाड़ दो।' तो जीत सकते हैं न?

दादाश्री : हाँ, लेकिन विषय ऐसी चीज़ है कि यदि उसमें एकाग्रता हो जाए तो आत्मा को भूल जाए। इसलिए यह गांठ इस प्रकार से हानिकारक है, वह सिर्फ इसीलिए कि जब वह गांठ फूटती है तब एकाग्रता हो जाती है। एकाग्रता हो जाए तब विषय कहलाता है। एकाग्रता हुए बगैर विषय कहलाएगा ही नहीं न! वह गांठ फूटे, तब इतनी अधिक जागृति रहनी चाहिए कि विचार आते ही उखाड़कर फेंक दे, तो उसे वहाँ पर एकाग्रता नहीं होगी। यदि एकाग्रता नहीं है तो वहाँ पर विषय है ही नहीं, तो वह गांठ कहलाएगी जब वह गांठ विलय होगी तब काम होगा।

प्रश्नकर्ता : मतलब अगर वह गांठ विलय हो जाए तो फिर वह आकर्षण का व्यवहार ही नहीं रहेगा न?

दादाश्री : वह व्यवहार ही बंद हो जाएगा। पिन और चुंबक का संबंध ही बंद हो जाएगा। वह संबंध ही नहीं रहेगा। उस गांठ की वजह से यह व्यवहार जारी है न! ये गांठें, वे तो आवरण हैं! जब तक ये गांठें हैं तब तक आत्मा का स्वाद नहीं आने देंगी।

जहाँ आकर्षण का प्रवाह, वहाँ देखो शुद्धात्मा

फिर भी जहाँ पर हमें आकृष्ट नहीं होना हो, उसके बावजूद भी आकर्षण होता रहे तो वह पहले की, पिछले जन्म की गलती है, इतना तय हो गया। नये सिरे से आकर्षण हो, वह चीज़ हमें समझ में आती है कि यदि हमें नहीं देखना है तो देखें ही नहीं, ऐसा होना चाहिए। लेकिन यह तो पुराना है, इसलिए वहाँ तो हमें नहीं देखना हो फिर भी खिंच जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : इस जगह पर पुरुषार्थ करना है। जागृति रखना, वही पुरुषार्थ है?

दादाश्री : हाँ, वैसी जागृति रखना। तू रखता है, इतनी जागृति?

प्रश्नकर्ता : वहीं पर पुरुषार्थ है पूरा।

दादाश्री : ऐसा?! तुझे समझ में आता है कि यह पिछले जन्म की गलती है, ऐसा? क्या आता है समझ में? तुझे ऐसा अनुभव हुआ है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, मतलब खुद की जागृति है कि यह दोष हुआ। अब उसे धोकर खुद तैयार हो जाए, खुद उससे मुक्त हो जाए लेकिन फिर से

सरकमस्टेन्शिअल एविडेन्स मिल जाए, निमित्त मिल जाए तो फिर वापस विषय की गांठ फूटती ही है।

दादाश्री : अत: इस इन्द्रिय ज्ञान का स्वभाव ऐसा है कि सामने वाला बहुत आकर्षक हो और रागी स्वभाव वाला हो तो, वह आपकी आँखों में धूल झोंकता है। उस समय बहुत जाग्रत रहना पड़ेगा। हम जानते हैं कि इसे नहीं देखना है, फिर भी आकर्षण क्यों हो रहा है? वहाँ पर हमें क्या करना चाहिए कि शुद्धात्मा ही देखते रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : उस समय फिर से प्रत्याख्यान करना चाहिए?

दादाश्री : प्रतिक्रमण भी करना है और प्रत्याख्यान भी करना है, दोनों करने हैं। प्रतिक्रमण इसलिए करना है कि पूर्व जन्म में कुछ देखा है, उसी से यह उत्पन्न हुआ है। यह संयोग क्यों मिला? वर्ना हर एक को कोई नहीं देखता। यह तो देखने को मिला सो मिला, लेकिन उसमें से आकर्षण का प्रवाह क्यों बह रहा है? अत: पूर्व जन्म का हिसाब है, इस जन्म में उसके प्रतिक्रमण करने पड़ेंगे। जो-जो विषय-विकारी भाव किए हों, इच्छा, चेष्टा, संकल्प-विकल्प किए हों, उन सब का प्रतिक्रमण करना पड़ेगा और फिर प्रत्याख्यान करना पड़ेगा और फिर उनके शुद्धात्मा को ही देखते रहना पड़ेगा।

जहाँ आकर्षण बंद, वहाँ प्रकट होती है वीतरागता

अभी इस ज्ञान के बाद जो राग-द्वेष होते हुए दिखाई देते हैं न, वह आकर्षण और विकर्षण है। वह *पुद्गल* का गुण है लेकिन 'मुझे ऐसा हो रहा है' कहा, वही राग है। और फिर ये राग-द्वेष खुद का स्वभाव नहीं है। आत्मा का स्वभाव राग-द्वेष वाला है ही नहीं। स्वभाव से आत्मा वीतराग है। ये राग-द्वेष तो *पुद्गल* का स्वभाव है। अर्थात् आकर्षण और विकर्षण *पुद्गल* का स्वभाव है। *पुद्गल* के इस स्वभाव को खुद का स्वभाव मानकर खुद ऐसा कहता है कि, 'मुझे राग-द्वेष हो रहे हैं।' यह रोंग बिलीफ है।

आप खुद शुद्धात्मा हो। यह बाकी का जो कुछ भी बचा है न, उस ज्ञेय और दृश्य को आप सामने लाओ तो उससे लेना-देना नहीं है। ज्ञेय तो ऐसा भी हो सकता है और वैसा भी हो सकता है। ज्ञेय तो, अंदर मन में क्या कहता है, 'आत्म हत्या करनी पड़ेगी' लेकिन किसे? उसे न! हमें क्या? हम तो जानने वाले हैं। अर्थात् यह पद कुछ अलग ही प्रकार का है, वीतराग पद है।

प्रश्नकर्ता : पहले तो ज्ञाता-द्रष्टा नहीं रह पाता और कहता है, 'नहीं, यह मुझे सेट नहीं होगा।'

दादाश्री : हाँ, ऐसा होता है और अब तो वास्तव में ज्ञाता-द्रष्टा रह ही पाते हैं! उसमें तो रह ही नहीं सकते। उसमें तो ज़रा सा अंदर कुछ खिंचाव रहता था, आकर्षण रहता था। यह तो आकर्षण रहित है, कितना अच्छा है! आकर्षण बंद हुआ कि वीतरागता उत्पन्न हो जाती है तो यहाँ पर आपका आकर्षण बंद हो गया है और अब वीतरागता उत्पन्न होगी।

हम में भी पहले का वैसा माल भरा हुआ तो है लेकिन आकर्षण नहीं होता हमें। ज़रा सा भी आकर्षण नहीं। अत: फिर वहाँ पर वीतरागता रहती है हमें। भरा हुआ माल है इसलिए अगर आपको अभी आकर्षण होने लगे तो, वह राग नहीं कहलाएगा। राग करने वाला कोई होना चाहिए, राग का कर्ता होना चाहिए और बिना कर्ता के राग नहीं हो सकता। क्या तू कर्ता है?

प्रश्नकर्ता : कभी तन्मयाकार हो जाते हैं इसलिए कर्ता बन जाते हैं।

दादाश्री : वह तो, जहाँ रुचि हो वहाँ पर

तन्मयाकार हो जाता है। लोग जब पैसे गिनते हैं, तब तन्मय हो जाते हैं या नहीं?

प्रश्नकर्ता : हो जाते हैं।

दादाश्री : हाँ बस! उसमें कोई गुनाह नहीं है। उसके लिए आत्मा ऐसा नहीं कहता कि आप तन्मयाकार क्यों हो गए? आत्मा तो आत्मा ही है और धीरे-धीरे वह दशा कम होती जाती है। यह केवलज्ञान की ओर बढ़ता जाता है। निरंतर ज्ञान रहे, तब उसे केवलज्ञान कहा जाता है। यहाँ तो, अभी फाइलों का *निकाल* करना पड़ रहा है न!

अब जो बचा, वह है पौद्गलिक आकर्षण

यह तो 'बिलीफ' ही 'रोंग' थी, वर्ना आत्मा रागी भी नहीं था और द्वेषी भी नहीं था। राग-द्वेष आत्मा में हैं ही नहीं। आत्मा में वे गुण हैं ही नहीं। ये सभी आरोपित भाव हैं। आरोपित भाव कैसे हैं? व्यवहार के हैं। यानी कि सिर्फ आपकी 'बिलीफ' ही रोंग है कि 'मुझे राग हो रहा है, और मुझे द्वेष हो रहा है।' जो उस 'रोंग बिलीफ' को उखाड़ दे, वह 'ज्ञानी'। वह 'बिलीफ' उखड़ सके ऐसी नहीं है। आपकी वह 'रोंग बिलीफ' हमने उखाड़ दी है।

प्रश्नकर्ता : इसे ज़रा विस्तार से समझाइए न कि 'बिलीफ रोंग' है और 'ज्ञानी पुरुष' बिलीफ को उखाड़ देते हैं।

दादाश्री : हम क्या कहते हैं कि आत्मा अगुरु-लघु स्वभाव का है और राग-द्वेष गुरु-लघु स्वभाव के हैं। इसलिए उन दोनों में संबंध भी नहीं था और साझेदारी भी नहीं थी। ये जो आरोपित भाव हैं कि आत्मा को राग होता है और द्वेष होता है, वे व्यवहार के भाव हैं। लोग ऐसा कहते हैं कि मुझे इसके प्रति राग है। अब वास्तव में आपको पौद्गलिक आकर्षण है! क्योंकि आपको मैंने ज्ञान दिया है इसलिए आपका आत्मा अलग हो गया है, तो अब क्या बचा? पौद्गलिक आकर्षण बचा। *पुद्गल* में आकर्षण नामक गुण है और विकर्षण नामक गुण है। अब लोग उस आकर्षण को 'राग' कहते हैं और विकर्षण को 'द्वेष' कहते हैं।

यह तो परमाणुओं का साइन्स है। उसमें आत्मा को कुछ भी लेना-देना नहीं है। पर लोग तो भ्रांति से परमाणु के खिंचाव को मानते हैं कि, 'मैं खिंचा'। आत्मा खिंचता ही नहीं।

इलेक्ट्रिसिटी के चुंबकत्व से है, 'मैं' अलग

प्रश्नकर्ता : यह सब चेतन में कहाँ से घुस गया? ऐसा क्यों शुरू हो गया?

दादाश्री : उसे ऐसा भान हुआ कि 'यह तो, मैं खिंच रहा हूँ' और यदि इतना समझ ले कि यह पुतला उस पुतले के साथ... उन दोनों में इलेक्ट्रिसिटी की वजह से दोनों खिंच रहे हैं, उसे 'मैं जानने वाला हूँ'... लेकिन ऐसा भान नहीं रहा उसे। इलेक्ट्रिकल ऐडजस्टमेन्ट की वजह से चुंबकत्व उत्पन्न होता है। इसलिए मुझे नहीं खिंचना है फिर भी खिंच जाता हूँ। इसलिए समझ में ऐसा आता है कि यह खुद नहीं खिंच रहा है। तय किया हो कि 'बिस्तर पर से इधर-उधर नहीं होना है।' लेकिन वापस आधे घंटे बाद उठ जाता है! तब मन में ऐसा होता है कि, 'मैं ही कमज़ोर हूँ।' 'तय किया था न? फिर तू कैसे कमज़ोर पड़ गया? यह तो भीतर दूसरा भूत घुस गया है।' इस पर लोगों ने मुझसे फिर पूछा कि, 'यह क्या हो रहा है?' मैंने कहा, 'यह तो इलेक्ट्रिकल ऐडजस्टमेन्ट की वजह से चुंबकत्व रहता है।

इस विज्ञान को तो समझ कि 'कौन खींच रहा है?' तुझे नहीं खिंचना है, फिर भी कौन तुझे खींच ले गया? और कौन मालिक है बीच में, जो खींच ले गया? तब कहता है, 'मैं खिंच गया, मेरा मन बिगड़ गया। मन निर्बल हो गया।' अरे!

तेरा मन तुझे क्यों खींचने लगा? मन से तेरा क्या लेना-देना है? वह मिकेनिकल ऐडजस्टमेन्ट अलग है और तू अलग।

साइन्टिफिक तरीके से छूटे आकर्षण

यह तो इलेक्ट्रिसिटी की वजह से सभी परमाणु पावर वाले हो जाते हैं और इसलिए परमाणु खिंचते हैं। जैसे, पिन और चुंबक के बीच क्या कोई आ गया है? पिन को हमने सिखाया था कि तू इधर-उधर होना?

प्रश्नकर्ता : उसे इलेक्ट्रिसिटी छूए ही नहीं, ऐसा नहीं हो सकता? उसे कंट्रोल नहीं किया जा सकता?

दादाश्री : कंट्रोल नहीं हो सकता। कभी भी इलेक्ट्रिकल चीज़ को कंट्रोल नहीं किया जा सकता। कंट्रोल तो, उसे ऐडजस्टमेन्ट करने से पहले कंट्रोल किया जा सकता है। बाद में, ऐडजस्टमेन्ट तय होने के बाद फिर नहीं हो सकता।

यानी यह पूरी देह तो विज्ञान है। विज्ञान से यह सब चल रहा है। अब, जब खिंचाव होता है तो उसे लोग कहते हैं कि, 'मुझे राग हुआ।' अरे! आत्मा को राग तो होता होगा? आत्मा तो वीतराग है! आत्मा को राग भी नहीं होता और द्वेष भी नहीं होता। ये दोनों तो खुद की कल्पना है। उसे भ्रांति कहते हैं। भ्रांति चली जाए तो फिर कुछ है ही नहीं।

और फिर यह एक प्रकार का आकर्षण नहीं है। बच्चों के प्रति भी आकर्षण रहता है। यानी यह एक प्रकार की इलेक्ट्रिसिटी से ये सारे परमाणु चुंबक जैसे हो जाते हैं, उसमें यदि सामने वाले के मिलते-जुलते परमाणु आएँ, तो वहाँ आकर्षण होता है, अन्यत्र आकर्षण नहीं होता। चुंबक का तो हमें अनुभव है न? उसमें कौन किसके प्रति राग करता है? और यहाँ तो आप राग नहीं करते हैं न, किसी से? जैसा वह चुंबक स्वभाविक है, वैसा ही यह भी स्वभाविक है। लेकिन इसमें क्या कहते हैं कि, 'मैंने किया', 'मैं कर रहा हूँ' ऐसा कहा कि चिपका फिर! वर्ना कहेंगे, 'मुझसे ऐसा हो गया।' 'अरे! क्यों फँसता है!' आकर्षण हो जाए तब फिर उसे, 'यह मेरा, इतना मेरा' करता रहता है। अरे! नहीं है तेरा। ज्ञानी पुरुष खुद मुक्त हुए हैं, वे सभी को मुक्त करवा देते हैं। उनके साइन्टिफिक तरीके से वे रास्ता बताते हैं कि ऐसे छूटा जा सकता है, नहीं तो छूटने का और कोई रास्ता नहीं है। यानी मोक्षमार्ग को समझना है, केवल समझते रहना है!

तत्त्व दृष्टि और अवस्था दृष्टि

इस ज्ञान के बाद आपकी दृष्टि तत्त्व-दृष्टि हो गई है इसलिए तत्त्व को देखना सीखे हो और अवस्थाओं को भी देख सकते हो लेकिन अवस्था अपना स्वरूप नहीं है। ज्ञान मिलने के बाद शायद अगर ज्ञान कहीं पर ज्ञेय में चिपक जाए तो भी तत्त्व दृष्टि से ऐसा लगता है कि यह तो चंदूभाई का है, मेरा नहीं है। तत्त्व अनंत अवस्था वाला होता है, अवस्थाओं के *एलिया (हेरियां)* (किसी सूराख में से आने वाली सूर्य की किरणें) पड़ते हैं। उस तरह से जैसे सूर्यनारायण बादल के पीछे होते हैं, फिर भी उनकी अवस्था की किरणें बाहर आती हैं। किसी को भी जब हम अवस्था दृष्टि से देखते हैं, तभी तो हम पर उसका प्रभाव पड़ता है। अवस्था दृष्टि से ही आकर्षण-विकर्षण है, तत्त्व दृष्टि से नहीं है। अवस्था में 'मैं हूँ', ऐसा माना कि तुरंत ही अंदर चुंबकपना उत्पन्न हो जाता है और आकर्षण शुरू हो जाता है। तत्त्व दृष्टि अर्थात् संपूर्ण दृष्टि। निश्चय दृष्टि अर्थात् तत्त्व और व्यवहार अर्थात् अवस्था।

अवस्था दृष्टि से देखने पर ही उसका ऐसा सब असर होता है। अवस्था दृष्टि से देखोगे तो आकर्षण-विकर्षण होगा और तत्त्व दृष्टि से देखोगे

तो मोक्ष होगा। किसी को तत्त्व दृष्टि से देखोगे तो आपको लाभ होगा और अवस्था दृष्टि से देखोगे तो आप उसी में खो जाओगे। आँखों से (चर्मचक्षु से) देख-देखकर ही तो यह पूरा जगत् खो गया है। तत्त्व दृष्टि से सामने वाले में आत्मा दिखाई देता है।

तन्मयाकार न हो, ऐसा विज्ञान

प्रश्नकर्ता : वह कैसा है कि यों दृष्टि गई कि अंदर खड़ा हो जाता है, और दृष्टि नहीं गई हो तो कुछ भी नहीं। लेकिन एक बार यों देख लिया हो तो फिर अंदर चंचल परिणाम खड़े हो जाते हैं।

दादाश्री : दृष्टि, वह चीज़ 'हम' से अलग है। तो फिर दृष्टि गई, उससे हमें क्या फर्क पड़ा? लेकिन हम अंदर चिपकना चाहें, तब दृष्टि क्या करे बेचारी?! होली की जब पूजा करने जाते हैं, तब वहाँ अपनी आँखें झुलस जाती हैं क्या? यानी होली को देखने से आँखें नहीं झुलसतीं। क्योंकि उसे हम सिर्फ देखते ही हैं। उसी तरह इस दुनिया में किसी भी जगह पर आकर्षण हो, ऐसा है ही नहीं, लेकिन अगर खुद के अंदर ही यदि कुछ टेढ़ा है तो आकर्षण होगा!

प्रश्नकर्ता : दो प्रकार की दृष्टि है, उसमें एक दृष्टि ऐसी है कि हम देखते हैं कि चमड़ी के नीचे खून-मांस और हड्डियाँ हैं, उसमें क्या आकर्षण? और दूसरी दृष्टि यह है कि उसमें शुद्धात्मा है और मुझ में शुद्धात्मा है। इन दोनों में कौन सी दृष्टि उच्च मानी जाएगी?

दादाश्री : उसमें तो दोनों दृष्टियाँ रखनी पड़ेंगी। वह शुद्धात्मा है, ऐसी दृष्टि तो अपने पास है ही। और श्री विज़न वाली दृष्टि तो, अगर ज़रा सा भी आकर्षण होने लगे तो, जैसा है वैसा ही रखना चाहिए, वर्ना मोह हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : हाँ, ठीक है। मैं भी शुद्धात्मा और वह भी शुद्धात्मा, यदि ऐसा हो तो जो अन्य प्रकार का आकर्षण है, वह नहीं रहेगा।

दादाश्री : नहीं रहेगा, लेकिन इतनी अधिक जागृति नहीं रह पाती। जब आकर्षण होता है, तब शुद्धात्मा को भूल जाता है। शुद्धात्मा को भूल जाए, तभी उसे आकर्षण होता है, वर्ना आकर्षण नहीं हो सकता। इसीलिए तो हमने तुम्हें ऐसा ज्ञान दिया है कि तुम्हें आत्मा दिखाई दे।

तुम्हें आकर्षित नहीं होना हो, फिर भी आँखें आकृष्ट हो जाती है। तुम यों आँखें दबाते रहो, फिर भी उस तरफ चली जाती हैं!

प्रश्नकर्ता : ऐसा क्यों होता है? पुराने परमाणु हैं इसलिए?

दादाश्री : नहीं, पहले आपने भूल की है, पहले तन्मयाकार होने दिया है, उसी का यह फल आया है तो अब उस आकर्षण में वापस तन्मयाकार नहीं होकर उसका प्रतिक्रमण करके वह भूल निकाल देनी है। अगर फिर से तन्मयाकार हो जाए तो फिर नये सिरे से भूल हुई, तो उसका फल अगले जन्म में आएगा। अत: तन्मयाकार नहीं हो, ऐसा यह विज्ञान है अपना!

जो तन्मयाकार नहीं हुआ, वह आकर्षण से जीत गया

प्रश्नकर्ता : जब चुंबक और पिन दोनों आमने-सामने आते हैं, तब आकर्षण होता है। अब यह आकर्षण समाप्त कब होगा?

दादाश्री : यह तो हमेशा रहेगा ही। जब तक लोहा लोहे के भाव में है, तब तक रहेगा। यदि चुंबकत्व उतर जाए तो आकर्षण चला जाएगा। जहाँ आकर्षण हो जाए, उस आकर्षण में यदि तन्मयाकार हो गया तो वह चिपक गया। आकर्षण हो जाए, लेकिन आकर्षण में तन्मयाकार नहीं हो तो नहीं

चिपकेगा। फिर अगर आकर्षण हो जाए तो उसमें हर्ज नहीं है। आकर्षण हुआ उसमें हर्ज नहीं है लेकिन जो तन्मयाकार नहीं हुआ, वह जीत गया।

प्रश्नकर्ता : खुद को यह चीज़ कैसे समझ में आएगी कि खुद इसमें तन्मयाकार हो गया है?

दादाश्री : उसमें 'अपना' विरोध होना चाहिए, 'अपना' विरोध, वही तन्मयाकार नहीं होने की वृत्ति है। 'हमें' विषय के संग में चिपकना नहीं है, इसलिए 'अपना' विरोध तो रहता ही है न? विरोध है, वही अलग रहना कहलाता है और गलती से चिपक जाए, गच्चा खाकर चिपक जाए, तो फिर उसका प्रतिक्रमण करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : निश्चय से तो खुद का विरोध है ही, फिर भी ऐसा होता है कि उदय ऐसे आ जाते हैं कि उसमें तन्मयाकार हो जाते हैं, वह क्या है?

दादाश्री : विरोध है तो तन्मयाकार नहीं हो सकते और तन्मयाकार हुए तो 'गच्चा खा गए' ऐसा कहलाएगा। तो ऐसे गच्चा खाया, उसके लिए प्रतिक्रमण तो है ही लेकिन गच्चा खाने की आदत मत डाल लेना, गच्चा खाने के 'हेबिच्युएटेड' मत हो जाना। क्या कोई जान-बूझकर फिसलता है? जहाँ चिकनी मिट्टी हो, कीचड़ हो, वहाँ लोगों को जान-बूझकर फिसलने की आदत होती है या नहीं? लोग क्यों फिसल जाते होंगे?

प्रश्नकर्ता : वह मिट्टी का स्वभाव है और खुद मिट्टी पर चला, इसलिए।

दादाश्री : मिट्टी के स्वभाव को तो वह खुद जानता है इसलिए फिर पैर की उंगलियाँ जमाकर चलता है, और भी सभी प्रयत्न करता है। हर तरह के प्रयत्न करने के बावजूद भी अगर गिर जाए, फिसल जाए, तो उसके लिए भगवान उसे अनुमति देते हैं। लेकिन फिर वह ऐसी आदत ही डाल दे, तो क्या होगा?!

प्रश्नकर्ता : आदत नहीं पड़नी चाहिए।

दादाश्री : फिसलना तो अपने हाथ में, क़ाबू में नहीं रहा, इसलिए सब से अच्छा तो 'अपना' विरोध, ज़बरदस्त विरोध! फिर जो कुछ हुआ, उसका ज़िम्मेदार तू नहीं है। तू चोरी करने के बिल्कुल विरोध में हो, फिर तुझसे चोरी हो जाए तो तू गुनाहगार नहीं है। क्योंकि तू उसके विरोध में है।

प्रश्नकर्ता : हम विरोध में हैं ही, फिर भी यह जो चूक जाते हैं, वह क्या चीज़ है?

दादाश्री : फिर यदि चूक जाते हो तो उसमें परेशीनी नहीं है। उसे चूक जाने में भगवान के यहाँ कोई हर्ज नहीं है। जितना चूक गए हैं, भगवान तो उसे याद नहीं रखते। क्योंकि चूक जाने का फल तो उसे तुरंत ही मिल जाता है। उसे दु:ख तो होता ही है न? वर्ना अगर वह शौक की खातिर करता, तो उसे आनंद होता।

प्रश्नकर्ता : इस विषय के बारे में खुद की होशियारी कितनी चल सकती है?

दादाश्री : ज्ञान मिला हो तो पूरी होशियारी चल सकती है।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान मिल जाने के बावजूद भी कुछ अंश तक तो प्रकृति भूमिका निभाती ही है न?

दादाश्री : नहीं। ज्ञान से प्रकृति निर्मल हो जाती है। विषय में खुद की सहमति नहीं हो तो निर्मल होती जाती है।

प्रश्नकर्ता : विषय में सहमति नहीं होती फिर भी आकर्षित हो जाता है।

दादाश्री : वह आकर्षित तो हो सकता है। ऐसे आकर्षित हो जाए तो उसे भी जानना चाहिए। लेकिन स्ट्रोंग निश्चय कभी भी किया ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : कभी भी न चुके ऐसा चाहिए।

दादाश्री : अपना तो निश्चय होना चाहिए कि हमारा यह ऐसा निश्चय है। फिर अगर कुदरत करे, तो वह अपने हाथ का खेल नहीं है। वह साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स है, उसमें किसी का नहीं चलता।

प्रश्नकर्ता : इसका अर्थ तो यह हुआ कि ऐसे संयोग मुझे मिलने ही नहीं चाहिए। लेकिन यह कैसे होगा?

दादाश्री : ऐसा होगा ही नहीं न! जब तक जगत् है, संसार है, तब तक ऐसा नहीं हो सकता। ऐसा कब होगा? जैसे-जैसे आप आगे बढ़ते जाओगे, संयोग कम होते जाएँगे वैसे-वैसे उस जगह पर भूमिका अपने आप ही आएगी। ज्ञानी की भूमिका सेफ साइड वाली होती है! उनके सभी संयोग सुगम होते हैं।

प्रश्नकर्ता : उनका व्यवस्थित उस तरह गढ़ा हुआ होता है?

दादाश्री : हाँ, वैसा गढ़ा हुआ होता है। लेकिन वह एकदम से ऐसे नहीं हो सकता। आपको तो, अभी कई मील पार करने के बाद, वह रोड आएगी।

- जय सच्चिदानंद

पूज्य नीरूमाँ / पूज्य दीपकभाई को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत	➢ **'दूरदर्शन'-गिरनार** पर हर रोज़ पर सुबह 7-30 से 8-30, (गुजराती में)
	➢ **'दूरदर्शन'-गिरनार** पर हर रोज़ पर रात 9 से 10, (गुजराती में)
	➢ **'अरिहंत'** पर हर रोज़ सुबह 2-50 से 3-50, दोपहर 2-30 से 3 तथा रात 8 से 9 (गुजराती में)
	➢ **'साधना'** पर हर रोज़ सुबह 7-50 से 8-15 तथा रात 9-30 से 9-55 (हिन्दी में)
	➢ **'वालम'** पर हर रोज़ शाम 6 से 6-30 (केवल गुजरात राज्य में)
	➢ **'उड़ीसा प्लस'** पर हर रोज़ सुबह 7-30 से 8 (हिन्दी में-केवल उड़ीसा राज्य में)
	➢ **'दूरदर्शन सह्याद्रि'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 (मराठी में)
	➢ **'आस्था कन्नड़ा'** पर हर रोज़ दोपहर 12 से 12-30 तथा शाम 4-30 से 5 (कन्नड़ा में)
USA-Canada	➢ **'Rishtey-USA'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 तथा 8 से 8-30 EST (हिन्दी में)
	➢ **'TV Asia'** पर हर रोज, सुबह 7-30 से 8 EST (गुजराती में)
UK	➢ **'वीनस' टीवी** पर हर रोज़ सुबह 8 से 8-30 GMT (हिन्दी में)
	➢ **'वीनस'** टीवी पर हर रोज़ सुबह 8-30 से 9 GMT (गुजराती में)
	➢ **'Rishtey-UK'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 Western European Time (6 to 6-30am GMT)
	➢ **'MA TV'** पर हर रोज, शाम 5-30 से 6-30 GMT (गुजराती में)
Australia	➢ **'Rishtey'** पर हर रोज़ सुबह 8 से 8-30 तथा दोपहर 1-30 से 2 (हिन्दी में)
Fiji-NZ-Sing.-SA-UAE	➢ **'Rishtey-Asia'** पर हर रोज़ सुबह 6 से 6-30 तथा 7-30 से 8 (हिन्दी में)
USA-UK-Africa-Aus.	➢ **'आस्था'** पर सोम से शुक्र रात 10 से 10-30 (डीश टीवी चेनल 849-युके, 719-युएसए)

विशेष निवेदन

कोरोना वायरस महामारी की वर्तमान परिस्थिति में पूज्यश्री दीपकभाई की निश्रा में सार्वजनिक तौर पर सत्संग कार्यक्रम स्थगित है। भविष्य में महामारी की परिस्थिति सामान्य होने के बाद कार्यक्रम आयोजित होंगे। वर्तमान आयोजन अनुसार इन्टरनेट के माध्यम से ओनलाइन सत्संग तथा उत्सव मनाना जारी रहेगा।

त्रिमंदिरो के संपर्क : अडालज : 9328661166-77, **राजकोट :** 9924343478, **भूज :** 9924345588, **मुंबई:** 9323528901, **अंजार :** 9924346622, **मोरबी :** 9924341188, **सुरेन्द्रनगर :** 9737048322, **अमरेली :** 9924344460, **वडोदरा:** 9574001557, **गोधरा :** 9723707738, **जामनगर :** 9924343687. **अन्य सेन्टरों के संपर्क : अहमदाबाद (दादा दर्शन) :** (079) 27540408, **वडोदरा (दादा मंदिर) :** 9924343335, **दिल्ली:** 9810098564, **बैंगलूर:** 9590979099, **कोलकता:** 9830080820
यु.एस.ए.-केनेडा: +1 877-505-3232, **यु.के.:** +44 330-111-3232, **ऑस्ट्रेलिया:** +61 402179706

जनवरी 2021
वर्ष-16 अंक-3
अखंड क्रमांक - 183

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. G-GNR-348/2021-2023
Valid up to 31-12-2023
LPWP Licence No. PMG/NG/036/2021-2023
Valid up to 31-12-2023
Posted at Adalaj Post Office
on 15th of every month.

दोष किसका, आँखों का या अज्ञानता का?

किसी पुरुष को देखकर यदि इस बहन के मन में ऐसा हो जाए कि, 'ओहोहो! यह पुरुष कितना सुंदर है, खूबसूरत है!' ऐसा आपको हुआ कि तभी अगले जन्म की गांठ पड़ गई। उससे अगले जन्म में आकर्षण होगा। कैसा रूप? इसे छीलें तो क्या निकलेगा? रूप किसे कहते हैं कि छीलने पर भी खराब नहीं निकले। इस रूप को तो देखने जैसा नहीं है। ये सोने का, चाँदी का, हीरे का रूप ठीक है। उन्हें छीलने पर उसे कुछ भी नहीं होगा, उसमें गंदगी नहीं है न?! इन मनुष्यों के गुण होते हैं, लेकिन वे कैसे गुण होते हैं? संसारी गुण। उन संसारी गुणों की प्रशंसा करने जाएँ, तब आकर्षण होता है। यानी कि यदि धार्मिक गुणों, ज्ञान के गुणों की प्रशंसा की जाए तो, वह बात अलग है। बाकी, जगत् प्रशंसा करने जैसा नहीं है। सिर्फ एक शुद्धात्मा ही समझने जैसा है।

- दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner. Printed at Amba Offset, B - 99, GIDC, Sector - 25, Gandhinagar - 382025.